इकाई 16 यूरोपीय यात्रा-वृत्तांत*

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 अफ़ानासी निकितिन

16.2.1 भारत और यहाँ के निवासी

16.2.2 नगर तथा वाणिज्यिक गतिविधियाँ

16.3 डोमिंगो पायस तथा फ़र्नाओ नूनिज़

16.3.1 डोमिंगो पायस

16.3.2 फर्नाओ नूनिज़

16.4 सर टॉमस रो

16.5 फ्रांसिस्को पेल्सार्ट

16.6 जीन बैप्टिस्ट टैवर्नियर

16.7 फ्रंस्वा बर्नियर

16.8 निकोलो मनुची

16.9 सारांश

16.10 शब्दावली

16.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

16.12 संदर्भ ग्रंथ

16.13 शैक्षणिक वीडियो

16.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समर्थ होंगेः

- भारत के विषय में यूरोपीय यात्रियों के लेखन में अभिव्यक्त विभिन्न यूरोपीय दृष्टिकोणों को समझने में,
- उनके भारत-संबंधी विवरणों में अंतर्निहित पक्षपातों तथा सांस्कृतिक मनोग्रंथियों का परीक्षण करने में,
- यह विश्लेषण करने में कि किस प्रकार उनकी निजी स्थिति ने भारतीय सभ्यता, राजनीतिक व्यवस्था, धार्मिक रीतियों तथा समाज के उनके विवरणों को प्रभावित किया,
- भारत के अतीत के पुनर्निर्माण में उनके पर्यवेक्षण के महत्व का आकलन करने में, और
- समय में परिवर्तन के साथ-साथ उनके दृष्टिकोणों में क्रमिक विकास को समझ पाने में।

16.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम यह चर्चा करेंगे कि किस प्रकार विभिन्न यूरोपीय यात्रियों ने पन्द्रहवीं शताब्दी से लेकर अठारहवीं शताब्दी तक अपने लेखन में भारत का चित्रण प्रस्तुत किया। इनमें से अधिकांश यूरोपीय स्वनिर्मित थे, 'अपने व्यवसाय में वे कैथोलिक पादरी तथा तोपख़ाने के जानकारों से लेकर अनुवादक, जौहरी, चित्रकार, निर्माता तथा व्यापारी, आदि थे'। उनकी रचनाएँ भारतीय उपमहाद्वीप

* श्री जितेश कुमार जोशी, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

के राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक परिवेश के कई पहलुओं का प्रतिनिधित्व करती हैं। जहाँ कुछ विद्वानों ने उनके द्वारा किए गए भारत के, या पूर्व के, वर्णनों को सईद की प्राच्यवाद की अवधारणा के अंदर रखा है, जिसमें पूर्व की छवि को पश्चिम की छवि के ठीक उलट रचा जा रहा था, अर्थात् 'दूसरे' की कमतरी का एक बोध हमेशा ही इन विवरणों का हिस्सा रहा था। वहीं सुब्रह्मण्यम यह तर्क देते हैं कि एक ऐसी दुनिया में 'जहाँ-जब प्रत्यक्ष विजय और प्रभुत्व नियम नहीं था (जिस प्रकार मेक्सिको तथा पेरू में हुआ था) संस्कृतियाँ अक्सर एक **सीमित संघर्ष** की स्थिति में आमने-सामने आईं' (सुब्रह्मण्यम 2008: 37)। इसका तात्पर्य है कि यद्यपि इन दो संसारों के बीच सद्भाव तथा परस्पर समझ का अभाव रहा था, किंतु इससे यह संकेत नहीं मिलता कि यूरोपीय किसी श्रेष्ठता की स्थिति में थे।

लम्बे समय तक यह भी माना जाता रहा कि भारतीयों के मुकाबले यूरोपीय यात्री मध्यकालीन तथा प्राक्-आधुनिक भारत का वर्णन करने में अधिक ईमानदार तथा सटीक रहे हैं। इस मत के अनुसार भारतीय 'इतिहास-बोध से हीन', 'पारलौकिक' तथा दुनियावी विषयों के प्रति उदासीन रहे थे और इस कारण अपने जीवन का बखान करने में असमर्थ थे (वनिना 2013: 269)। विशेषकर, भारतीय भाषाओं के ग्रंथों को ऐतिहासिक शोधों में कोई महत्व नहीं दिया गया था, हालांकि फ़ारसी इतिवृत्तों को विश्वसनीय माना जाता था।

यूरोपीय यात्रा-वृत्तांतों को कम्पनी दस्तावेज़ों के साथ उत्तर-मध्यकालीन तथा प्राक्-आधुनिक कालीन भारत के लिए सर्वाधिक विश्वसनीय सामग्री माना जाता है। इन यात्रियों के मातृ-देश की सामाजिक-सांस्कृतिक तथा राजनीतिक पृष्ठभूमि तथा किसी ख़ास भारतीय परिस्थिति में उनकी प्रतिष्ठा का उनके दृष्टिकोण पर पड़े प्रभाव को अनदेखा किया जाता रहा। इन यात्रियों के विवरणों पर विचार करते हुए जिस अन्य तथ्य को ध्यान में नहीं रखा गया, वह था समय के साथ उनके दृष्टिकोणों में आया परिवर्तन जिसका कारण उन स्थितियों में हुआ बदलाव था जिनमें वे यात्रा कर रहे थे। आरम्भिक सोलहवीं शताब्दी में भारत आने वाले यात्रियों ने एक राजनीतिक बिखराव की स्थिति अपने सम्मुख पाई थी, जहाँ लगभग आधा दर्जन राज्य स्थान-विशेष पर प्रभुत्व बनाने के लिए परस्पर संघर्षरत थे, इनमें विजयनगर का राज्य सबसे शक्तिशाली राज्य था, जिसके बारे में पुर्तगाली यात्रियों, जैसे डोमिंगो पायस (Domingo Paes) तथा फ़र्नाओ नूनिज (Fernao Nuniz), ने विस्तार से लिखा है। सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मुग़ल साम्राज्य का उदय हो रहा था जिसने सत्रहवीं शताब्दी में भारतीय उपमहाद्वीप में अपना प्रभुत्वशाली स्थान बना लिया था, अतः इस समय के यूरोपीय यात्रियों का सर्वाधिक ध्यान मुग़ल राजनीतिक-क्षेत्र पर था। जहाँ तक धर्म का संबंध है, यूरोपीय यात्री दो संपूरक तरीकों से इसे देख रहे थे, एक ओर तो उन्होंने अपने विश्वास और भारतीयों के विश्वासों के बीच समानांतर खोजने का प्रयास किया, वहीं दूसरी ओर, इनके बीच भिन्नता को स्पष्ट किया। यह चित्रण सम्पूर्णता में उनके धर्म की सत्यता और दूसरों के विश्वासों की व्यर्थता को सामने लाने का उद्देश्य रखता था।

पहले भाग में हम रूसी व्यापारी अफ़ानासी निकितिन (Afanasy Nikitin) के भारत-संबंधी अवलोकनों की चर्चा करेंगे, उसकी भारत की समझ केवल दक्खन तक सीमित थी, विशेषकर बीदर तक। उसके बाद, अगले भाग में, विजयनगर साम्राज्य के संबंध में दो पुर्तगाली यात्रियों के विवरणों की चर्चा की जाएगी, इनमें से एक डोमिंगो पायस है जो गोआ के पुर्तगाली क्षेत्र से व्यापारियों के समूह के साथ विजयनगर की यात्रा पर आया था और दूसरा पुर्तगाली यात्री फ़र्नाओ नूनिज़ घोड़ों का व्यापारी था। ये दोनों ही यात्री सोलहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में विजयनगर साम्राज्य में आए थे। अगले भाग में सर टॉमस रो (Thomas Roe) के दृष्टिकोण को चर्चा की जाएगी जो सोलहवीं शताब्दी के दूसरे दशक में जहाँगीर के दरबार में (1616-18), ईस्ट इंडिया कम्पनी के लिए व्यापारिक अधिकार प्राप्त करने हेतु, इंग्लैंड के राजा जेम्स प्रथम का पत्र लेकर आया था। अगला भाग फ़्रांसिस्को पेल्सार्ट (Francisco Pelsaert) पर केंद्रित है, जो एक डच फ़ैक्टर (Factor) था तथा कुछ समय तक आगरा में रुका था, उसका विवरण उत्तर तथा पूर्वी भारत के व्यापार-तंत्रों, उत्पादन तथा विनिर्माण केंद्रों की जानकारियों के संदर्भ में काफ़ी सम्पन्न है। टैवर्नियर (Tavernier) तथा बर्नियर (Bernier) दोनों ही फ्रांसीसी थे, इनमें से पहला एक व्यापारी था तथा बहुमूल्य रत्नों का विशेषज्ञ था। और दूसरा उत्तर-गैलीलियो कालीन बौद्धिक संसार से संबंध रखता था और उसके लेखन ने भारत के मुग़ल बादशाह की छवि को एक प्राच्य निरंकुशतावादी शासक के रूप में गढ़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। अंतिम भाग

निकोलो मनूची (Nicolo Manucci; मृ. 1720) पर विचार करता है, जिसके विवरण सबसे दिलचस्प, विस्तृत तथा चित्ताकर्षक हैं। उसने इन सभी यात्रियों की अपेक्षा, भारत में सबसे लम्बा समय बिताया था, और आरम्भिक अठारहवीं शताब्दी की शुरुआत में पांडिचेरी (पुदुचेरी) में उसकी मृत्यु हुई थी।

16.2 अफ़ानासी निकितिन

अफ़ानासी निकितिन (Afanasy Nikitin; मृ. 1472) एक रूसी व्यापारी था जो पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारत आया था। इस व्यापारी ने पहले ही क्रीमिया, जॉर्जिया, एशिया माइनर तथा वालेशिया (Walachia) में व्यापार में अपनी किस्मत आज़माई थी। उसने 1466 में त्वेर, रूस से अपनी यात्रा शुरू की तथा 1469 में वह दीव पहुँचा। उसका यात्रा-वृत्तांत वर्तमान में *वॉयजेस बियोंड थ्री सीज़* के नाम से विख्यात है। पहले वह वर्तमान अजरबाइजान (Azerbaijan) में स्थित शेरवान गया वहाँ से बाकू होते हुए वह ईरान के रास्ते भारत आया, ऐसा देश जिसने उसका अत्यधिक ध्यान खींचा था। 'निकितिन ने भारत आने की कोई पूर्व योजना नहीं बनाई थी, जैसे कि अन्य यूरोपीय यात्रियों ने किया, यह एक सांयोगिक यात्रा थी, और निकितिन अपने विवरण में यह स्वयं स्पष्ट करता है' (श्लापेंटोख 2012: 170)। जिस समूह के साथ वह यात्रा कर रहा था उसे तार्तारों द्वारा लूट लिया गया और शेरवान के शासक द्वारा कोई भी सहायता न मिलने पर उसने ईरान जाने का निर्णय किया जहाँ से वह होर्मुज गया, वहीं उसने भारत में घोड़े के व्यापार के महत्व के संबंध में सुना, इसलिए उसने एक घोड़ा खरीदा कि उसे भारत में बेचकर कुछ लाभ कमा सके। इस प्रकार मुस्लिम तार्तारों के साथ उसकी मुठभेड़ों ने मुस्लिमों के प्रति उसका रवैया नकारात्मक बना दिया था, जिसका स्पष्ट प्रभाव उसके यात्रा-वृत्तांत में देखा जा सकता है। 'उसने भारत को न केवल एक अजनबी और विचित्र देश के रूप में देखा, बल्कि स्पष्ट रूप से अनैतिक या कम से कम विचित्र आदतों के देश के रूप में देखा था' (श्लापेंटोख 2012:172)। यहाँ हम संक्षेप में भारतीय लोगों, संस्कृति, धर्म तथा समाज के विषय में उसके अवलोकन की चर्चा करेंगे।

16.2.1 भारत और यहाँ के निवासी

निकितिन बड़े विस्तार के साथ भारतीय लोगों के परिधान तथा बनावट की चर्चा करता है। एक ओर तो वह चौल के राजकुमार तथा राजकुमारी की वेशभूषा का विस्तृत विवरण देता है, जहाँ वह सबसे पहले पहुँचा था; दूसरी ओर, वह उच्च वर्गीय लोगों के सेवकों द्वारा पहने जाने वाले वस्त्रों का भी वर्णन करता है, वह इन दोनों के बीच बहुत अंतर नहीं देखता है, केवल राजकुमार के सिर पर एक अतिरिक्त वस्त्र तथा राजकुमारियों के कंधों पर लिपटे हुए वस्त्र के अलावा। यद्यपि, जुन्नार में सर्द मौसम के समय पहने गए वस्त्रों का उसने विस्तार से वर्णन किया है:

> सर्दी में लोग एक वस्त्र अपने कूल्हों पर बाँधते हैं, दूसरा अपने कंधे पर और तीसरा अपने सिर पर धारण करते हैं। इस समय राजकुमार और कुलीन लोग पतलून और कमीज़ तथा कोट पहनते हैं, और एक वस्त्र अपने कंधों पर डालते हैं तथा एक अन्य कपड़े से स्वयं को लपेट लेते हैं, तीसरा वस्त्र वह अपने सिर को बांधने के लिए प्रयुक्त करते हैं।
>
> **बेक्लोव 1950: 15**

वह भारतीय लोगों के श्याम वर्ण का वर्णन करते समय स्वयं के श्वेत वर्ण के प्रति सचेत भी नज़र आता है।

निकितिन ने हिंदू जनसंख्या के धार्मिक व्यवहारों का भी अवलोकन किया। वह कहता है कि जब उसने लोगों को बताया कि वह मुस्लिम नहीं है बल्कि ईसाई है, जो ईसा मसीह पर विश्वास करता है, उन्होंने उससे कुछ भी नहीं छुपाया, अपनी प्रार्थना, अपने भोजन, अपने व्यवसाय और अपने जीवन के अन्य पहलुओं के विषय में। 'यदि वह लोगों के साथ आसानी से घुलमिल पा रहा था, इसका कारण यह नहीं था कि वह मुस्लिम नहीं था, बल्कि उसका स्वयं का विश्वास मुस्लिमों की अपेक्षा ग़ैर-मुस्लिमों पर अधिक था। वह उनके देवता को *बुत* कहता है और उनके आदम (Adam) पर विश्वास का उल्लेख भी करता है, संभवतः या तो वह आत्मा को आदम समझ रहा था या उसने किसी से मनु की कथा सुनी होगी। भारत में कुल 84 मत हैं और वे सभी *बुत* को मानते हैं, इनमें से एक मत के लोग दूसरे के साथ खाना-पीना और विवाह का संबंध नहीं रखते हैं, कुछ मांस, पक्षी, मछली और अंडे खाते हैं, लेकिन कोई भी गाय का मांस नहीं खाता है' (बेक्लोव 1950: 26)।

बीदर से वह श्री-शैलम के तीर्थस्थान पर भी गया, जिसे उसने *पर्वत* कहा है तथा इसे 'काफ़िरों के जेरूसलम' के रूप में वर्णित किया है, लेकिन यहाँ पत्थर से बने हुए विशाल मंदिर की वह अत्यंत प्रशंसा करता है जो अत्यधिक अलंकृत था तथा इसके मूर्ति शिल्प के उत्कृष्ट नमूनों की उसके द्वारा विस्तार से चर्चा की गई है। निकितिन ने इसके देवता का उल्लेख *बुत* के रूप में किया है, न कि मूर्ति को वह *बुत* कहता है। लेकिन उसे यह समझ थी कि ये मूर्तियाँ इस देवता-*बुत* के कई रूपों का प्रतीक थीं (बेक्लोव 1950: 277)। वनीना का यह तर्क है कि अधिकांश यूरोपीय यात्रियों द्वारा हिंदू धर्म की संकल्पना को समझने में असमर्थ रहने का कारण उनका भारतीय भाषाओं का अज्ञान था।

16.2.2 नगर तथा वाणिज्यिक गतिविधियाँ

वह विशेष रूप से चौल, जुन्नार, बीदर, गुलबर्गा, इत्यादि का वर्णन करता है। उसने इनके किलों की भव्यता, संरचना तथा सुरक्षा व्यवस्था की विस्तृत जानकारी उपलब्ध कराई है, उसने विभिन्न नगरों के बीच की दूरी या उनके बीच यात्रा करने में लगने वाले समय की जानकारी भी दी है। वह बीदर में सुल्तान के महल का वर्णन इस प्रकार करता है:

> सुल्तान के महल की ओर सात दरवाज़े जाते हैं, प्रत्येक दरवाज़े पर सैकड़ों संतरी और सैकड़ों लेखा-जोखा रखने वाले 'काफ़िर' ('kaffir') तैनात हैं, किंतु ये विदेशियों को दुर्ग में नहीं जाने देते हैं। कुछ उन सबका ब्योरा रखते हैं जो अंदर जाते हैं और कुछ उन सबका जो बाहर निकलते हैं ... बीदर के इस शहर को रात्रि में हज़ार दुर्ग-सैनिकों द्वारा सुरक्षा प्रदान की जाती है जो घोड़ों पर सवार रहते हैं, शस्त्र से सुसज्जित और प्रत्येक के पास एक मशाल होती है।
>
> **बेक्लोव 1950: 24**

इन नगरों के साथ ही उसने इन नगरों के उत्पादों का भी विशेष उल्लेख किया है जो उसके मार्ग में पड़े थे। कालीकट का वर्णन मुख्य पत्तन (port) के रूप में किया गया है, यद्यपि वहाँ मौजूद समुद्री डाकुओं के ख़तरे का उल्लेख किया गया है। कालीकट में अदरक, लौंग, काली मिर्च, दालचीनी, जायफल तथा कई मसालों के उत्पादन का उल्लेख किया है, साथ ही वहाँ विद्यमान सस्ते ग़ुलामों के बाज़ार का भी। चौल आने से पूर्व वह खंभात गया था, जहाँ उसने लाख और नील का उत्पादन होते देखा था। बीदर घोड़ों, रेशम तथा जरी वस्त्र के व्यापार के लिए विख्यात था। जाड़े के महीने में, जब वह जुन्नार में था, उसने गेहूँ, चने तथा अन्य अनाजों की बुवाई का वर्णन किया है, साथ ही ताड़ की छाल से बनने वाली विशेष शराब का भी उल्लेख करता है। लेकिन वह कहता है कि भारतीय क्षेत्रों की इन वस्तुओं का रूस में कोई महत्व नहीं है, और यदि इनमें से कुछ का हो भी तो इनके व्यापार में कोई लाभ नहीं है, क्योंकि मुस्लिम शासक विदेशियों से उच्च शुल्क वसूल करते हैं।

वह जब मुस्लिम भारत का उल्लेख करता है, तो उसका तात्पर्य बहमनी सुल्तान से है। वह कहता है कि सभी प्रशासनिक पदों पर खुरासानी लोगों का अत्यंत प्रभाव है और उनमें सबसे मुख्य स्थान मलिक-तुज्जार (महमूद गावाँ) का है, इस खुरासानी अमीर के पास दो लाख सिपाही हैं और इसी प्रकार वह मलिक ख़ान (निज़ाम-उल मुल्क) तथा फरत ख़ान की शक्ति का भी उल्लेख करता है। वह बीदर में सुल्तान की भव्य शोभा यात्रा का वर्णन करता है, जिसमें साथ में हाथी, घोड़े, नृतक, बाजे-गाजे तथा सैन्य टुकड़ियाँ चलती थीं:

> सुल्तान अपनी माँ और पत्नी के साथ आनंद पाने हेतु बाहर निकलता है, और उनके साथ दस हज़ार घुड़सवार और पचास हज़ार पैदल सैनिक चलते हैं, और साथ में दो सौ हाथी शस्त्रों से सज्जित हैं। उनके आगे हैं सौ शहनाई वादक तथा सौ नर्तकियाँ और सौ सोने की लगामों से बंधे हुए घोड़े, और सौ बंदर और सौ गणिकाएँ (सभी कुंवारी युवतियाँ)।
>
> **बेक्लोव 1950: 23**

श्लापेंटोख यह कहते हैं कि निकितिन अपने बाद आने वाले यात्रियों से इस अर्थ में भिन्न था कि वह आमजन के बीच आसानी से घुल-मिल गया। जहाँ मुस्लिमों के प्रति उसके मन में घृणा थी, वहीं वह व्यापक ईरानी-इस्लामी सांस्कृतिक व्यवहारों और भाषा-व्यवहार का हिस्सा भी था, जिसे उसके द्वारा प्रयुक्त किए गए *'काफ़िर'*, *बुत, बुतख़ाना* जैसे शब्दों और अरबी में अल्लाह के आह्वान से भी समझा जा सकता है।

बोध प्रश्न-1

1) भारत की धार्मिक प्रथाओं के संबंध में निकितिन का क्या विचार था?

.....

.....

.....

2) भारतीय वाणिज्यिक गतिविधियों के संबंध में निकितन के वर्णन का परीक्षण कीजिए।

.....

.....

.....

16.3 डोमिंगो पायस तथा फ़र्नाओ नूनिज़

इस भाग में हम देखेंगे कि किस प्रकार पुर्तगाली मूल के यात्री सोलहवीं शताब्दी में विजयनगर आए और उन्होंने यहाँ के राज्य, लोगों, उनकी संस्कृति, व्यापार तथा राजनीतिक विकासक्रम के संबंध में जीवंत विवरण उपलब्ध कराया। ये विवरण विजयनगर साम्राज्य के इतिहास की पुनर्रचना हेतु अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। एक ब्रिटिश सिविल सेवक रॉबर्ट सीवेल ने *अ फ़ॉरगॉटन एंपायर विजयनगरः कंट्रीब्यूशन टू द हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया* (1909) की रचना की जिसमें इन विवरणों के दो विस्तृत और ऐतिहासिक जानकारी से भरे वर्णनों के अनुवादों को शामिल किया गया था।

16.3.1 डोमिंगो पायस

डोमिंगो पायस 1520-1522 में विजयनगर आया, जब कृष्णदेवराय वहाँ का राजा था। पायस ने विजयनगर को **नरसिंह का राज्य** कहा है। इस यात्री ने इस नगर के दुर्गीकरण, सड़कों और विभिन्न वस्तुओं के बाज़ारों की महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराई है, साथ ही इस नगर के मुख्य मंदिरों, जिनमें हंपी में स्थित विरुपाक्ष तथा विट्ठलस्वामी के मंदिर शामिल हैं, का वर्णन किया है। पायस ने *महानवमी* उत्सव का लंबा विवरण प्रस्तुत किया है जिसे *विजय भवन* (*द हाउस ऑफ़ विक्ट्री*) में आयोजित किया जाता था और जिसका समापन नगर के बाहर कुछ दूरी पर सेनाओं के निरीक्षण के साथ होता था। पायस का यह विवरण नागलपुर (हॉस्पेट) में स्थित राजा के महल, कृष्णदेवराय के नए निवास के वर्णन के साथ समाप्त होता है। इनमें से कुछ पर हम विस्तार से चर्चा करेंगे।

विजयनगरः साम्राज्य की राजधानी

पायस ने विजयनगर के शहर के विशाल आकार की तुलना रोम से की है, जिसकी बहुत बड़ी जनसंख्या थी और शहर के भीतर ही एक लाख आवास निर्मित थे। पायस का इस नगर का विवरण काफ़ी सटीक है और हम्पी में हुए उत्खनन की पुष्टि करता हैः

> राजा ने इसके भीतर एक मज़बूत शहर की स्थापना की थी जिसे दीवारों और बुर्जों से घेरा गया था और इसके प्रवेश पर स्थित द्वार बहुत ही मज़बूत है ... इसकी दीवारें अन्य नगरों के दीवारों की तरह निर्मित नहीं है बल्कि इन्हें बहुत ही सुंदर ढंग से पत्थर की चिनाई के काम से बनाया गया है ... जिसके भीतर इमारतों की मनोहारी श्रृखलाएँ हैं ... जिनकी सपाट छते हैं। इनमें कई व्यापारी रहते हैं तथा यहाँ जनसंख्या की कोई कमी नहीं है क्योंकि कई सम्मानित व्यापारियों को राजा अपने नगरों से यहाँ भेजता है ...
>
> **सीवेल 1991: 244**

पायस इस नगर के बाज़ारों तथा वहाँ विक्रय के लिए उपलब्ध उत्पादों का वर्णन करता है। पायस ने यह अनुभव किया था कि यह नगर सार्वदेशिक चरित्र लिए हुए था, जहाँ विभिन्न राष्ट्रों के लोग व्यापार के उद्देश्य से निवास कर रहे थे, विशेष रूप से बहुमूल्य रत्नों और हीरों के व्यापार के लिए। यहाँ 'मूर लोगों' (मुस्लिमों) का नगर के एक आख़िरी सिरे पर एक अलग निवास-खंड था और ये मुस्लिम राजा द्वारा उसकी सेवा में नियुक्त किए गए थे। मंदिर के निकट की एक सड़क का वर्णन करते हुए वह उत्तम प्रकार के घरों की श्रृंखलाओं की जानकारी देता है, जिनका संबंध समाज के संपन्न तबकों, माणिक्य, मोती, छोटे मोती, वस्त्र, तथा 'धरती पर मिलने वाली हर तरह की वस्तु' और 'जिसे खरीदने की किसी

को चाह हो', के व्यापारियों से संबंधित थे। 'प्रत्येक शाम एक मेला वहाँ लगता था जिसमें व्यापारी कई प्रकार के साधारण घोड़े, नारंगी और नीबू, और संतरे, और अंगूर और उद्यानों में होने वाले हर प्रकार के उत्पाद तथा लकड़ी बेचते थे; इस सड़क पर आपको सब कुछ मिल सकता है' (सीवेल 1991: 255)।

पायस, नगर प्राचीर (city wall) के बाहर, उत्तर में स्थित, तीन सुंदर मंदिरों का विस्तृत वर्णन करता है। इनमें से एक विट्ठलेश्वर का मंदिर, दूसरा विरुपाक्ष का मंदिर तथा तीसरे को स्पष्ट नहीं किया गया है। विरुपाक्ष मंदिर को मुख्य मंदिर समझा जाता था और उसने इस मंदिर का बहुत ही विस्तृत विवरण दिया है, इसकी वास्तुकला, इसके अनुष्ठानों, और इसके ईष्टदेव का। वह इस पगोडा (मंदिर) के प्रत्येक संरचनात्मक पहलू का उल्लेख करता है, जैसे मुख्य द्वार की विपरीत दिशा में एक बहुत ही सुंदर सड़क, जिसमें यात्रियों के ठहरने के लिए छज्जे-युक्त घर और छायादार मार्ग, उच्च वर्ग के लोगों के ठहरने के लिए निवास-स्थान, मंदिर में पूजा हेतु आने पर राजा के रुकने का स्थान, पिरामिडाकार (pyramidical) स्तंभ-द्वार, जिस पर स्त्रियों, पुरुषों की आकृतियाँ और मिथकीय दृश्य उत्कीर्ण थे तथा जो एक बहुत बड़े अहाते में खुलता था, इत्यादि, शामिल थे। पायस इस मंदिर की इमारत में दीयों को प्रकाशित करने की व्यवस्था का और एक गोलाकार पाषाण के रूप में इसकी 'मुख्य प्रतिमा' का भी उल्लेख करता है।

पायस ने राजा द्वारा उद्यानों और चावल के खेतों की सिंचाई हेतु निर्मित तालाबों का भी उल्लेख किया है, इनमें से एक का निर्माण दो पहाड़ियों के बीच किया गया था ताकि दोनों तरफ़ की पहाड़ियों से आने वाला पानी इसमें एकत्र हो जाए और इसके अतिरिक्त नालियों के माध्यम से एक झील से भी इसमें पानी लाया गया था। 'इस तालाब के निर्माण के लिए राजा ने एक पहाड़ी को तुड़वाया और इसमें मैंने 15,000 व्यक्तियों को काम करते हुए देखा है, जो चीटियों के समान नज़र आते हैं और आप उस ज़मीन को नहीं देख सकते जिस पर वे चलते हैं। राजा ने इस तालाब के निर्माण कार्य को अपने *नायकों* के बीच बाँटा हुआ था, जिनमें से प्रत्येक का यह कर्तव्य था कि वह देखे व सुनिश्चित करे कि उसके अधीन कार्य करने वाले लोग अपना कार्य कर रहे हैं और इस प्रकार तालाब के निर्माण को पूर्ण किया जा सके' (सीवेल 1991: 245)।

विजय भवन में होने वाला उत्सव

पायस ने 'सितंबर के महीने में' नौ दिनों के लिए होने वाले इस उत्सव का अत्यंत विस्तृत विवरण दिया है। इसकी शुरुआत सुबह घोड़ों और हाथियों के संचलन के साथ होती थी, उसके बाद राजा देवता की मूर्ति को वस्त्रों से बने हुए कक्ष में सजाता था और तब नृत्य प्रदर्शन, कुश्ती की प्रतिस्पर्धा, आतिशबाजी, राजा के *नायकों* के विजय-रथों का संचलन होता था। इस उत्सव में समस्त घोड़ों को राजा के समक्ष प्रस्तुत किया जाता था और मुख्य पुरोहित द्वारा उनका अनुष्ठान के रूप में पूजन होता था। राजा का घोड़ा इस अनुष्ठान का नेतृत्व करता था जिसकी पीठ पर दो राज-छत्र लगे रहते थे। महारानी की सेविकाएँ अपने समस्त जवाहरातों और श्रेष्ठ वस्त्रों के साथ अपने हाथों में स्वर्ण पात्रों को लिए हुए, गलियारे पर चलते हुए निकल जाती थीं। इस उत्सव के बाद राजा अपनी सेना का निरीक्षण करता था। पायस ने उसकी सेना की संरचना तथा शक्ति के संदर्भ में भी जानकारी दी है जिसमें अश्व सेना, पैदल सेना और धनुर्धारी शामिल थे।

राजा तथा उसका व्यक्तित्व

राजा कृष्णदेवराय का वर्णन 'एक मध्यम कद के व्यक्ति और गोरी सूरत तथा मोटा या पतला होने के बजाय अच्छे छरहरे शरीर-सौष्ठव से सम्पन्न व्यक्ति के रूप में की गई है, उसके चेहरे पर चेचक के दाग़ थे'। उसे 'कृष्णराव महाशाह' ('Crisnarão Macação') यानी राजाओं के राजा की उपाधि दी गई है। कृष्णदेवराय की तीन मुख्य रानियाँ थी, जिनके बराबर के अधिकार थे और कुल 12,000 रानियाँ थीं। कृष्णदेवराय द्वारा ओरिया (ओडिशा) पर किए गए आक्रमण का भी उल्लेख किया गया है, और किस प्रकार उसने गजपति शासक को हराया और उसके पुत्र को बंदी बना लिया था तथा बाद में 'ओरिया' राजा की पुत्री से विवाह किया ताकि दोनों राज्यों के बीच शांति स्थापित हो सके। पायस ने विजयनगर राज्य के राजस्व और राजा के *नायकों,* राजा के दरबार में उनकी स्थिति तथा राजा के सापेक्ष उनकी शक्ति के संबंध में भी चर्चा की है।

16.3.2 फ़र्नाओ नूनिज़

फ़र्नाओ नूनिज़ पुर्तगाली अश्व-व्यापारी था, जिसने 1536-37 के बीच अपना विवरण लिखा। वह अच्युतराय के शासनकाल में राजधानी-नगर में था और संभवतः कृष्णदेवराय द्वारा लड़ी गई प्रारम्भिक लड़ाइयों में भी वह मौजूद रहा होगा। यह यात्री विशेष रूप से विजयनगर के इतिहास, इसकी स्थापना, इसके तीन राजवंशों के उत्तरोत्तर शासन और उनके द्वारा दक्खन के सुल्तानों तथा ओडिशा के रायों के साथ लड़े गए युद्धों में दिलचस्पी रखता था। नूनिज़ ने भी *महानवमी* उत्सव का विस्तृत उल्लेख किया है, विशेष रूप से शाही महिलाओं द्वारा पहने गए जवाहरातों तथा राजा की सेवा में कार्यरत हज़ारों महिलाओं का उसका वर्णन उल्लेखनीय है।

विजयनगर साम्राज्य का ऐतिहासिक विवरण

नूनिज़ अपने वृत्तांत की शुरुआत दिल्ली के सुल्तान मुहम्मद बिन तुग़लक़ का बिसनाग (विजयनगर से व्युत्पन्न; यहाँ इसका तात्पर्य अनेगुंडी के नगर से है, जो विजयनगर की राजधानी के रूप में स्थापित होने से पूर्व विजयनगर साम्राज्य के संगम वंश की राजधानी थी) के राज्य पर आक्रमण से करता है। यद्यपि नूनिज़ दावा करता है कि उसका वृत्तांत बिसनाग के राजाओं से संबंधित है जिन्होंने 1230 सी ई से शासन करना शुरू किया था, किंतु यह तिथि ग़लत है क्योंकि विजयनगर राज्य 1336 सी ई में अस्तित्व में आया था। साम्राज्य की स्थापना के संबंध में नूनिज़ का विवरण सटीक नहीं है और इसे अन्य स्रोतों से पुष्ट नहीं किया जा सकता है, जिस प्रकार वह दावा करता है कि दिल्ली के सुल्तान ने अनेगुंडी के नगर पर आक्रमण किया, इसके कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं हैं। यह सुविख्यात है कि कंपिली राज्य के दो भाइयों, जिन्हें तुग़लक़ ने बंदी बना लिया था और बाद में जिन्हें सुल्तान ने अपने दक्षिणी अभियानों का सेनानायक बनाया था, उन्होंने विजयनगर राज्य की स्थापना की थी तथा इससे पूर्व अनेगुंडी से उनका कोई संबंध नहीं था।

विजयनगर के ऐतिहासिक विवरण में उसके द्वारा अन्य त्रुटियाँ भी की गई हैं, जैसे सुल्तान द्वारा छह लोगों को बंदी बनाकर अपने साथ ले जाने, जिनमें से एक को विजयनगर का राजा बनाया गया और लोगों ने उसे सहर्ष स्वीकार किया क्योंकि वह उनके ही धर्म को मानने वाला था, इस प्रकार इस संबंध में उसका पूरा वृत्तांत काल्पनिक प्रतीत होता है और इसे सत्य के रूप में मुश्किल से ही स्वीकारा जा सकता है। इस विवरण के अनुसार इस राज्य की स्थापना सुल्तान के प्रयासों से हुई थी। इसके बाद वह विजयनगर (बिसनाग) के शहर की स्थापना की लोकप्रिय कहानी का उल्लेख करता हैः एक बार राजा शिकार के लिए निकला था तब उसने एक हिरण देखा, 'जो शिकारी कुत्तों से दूर भागने के बजाय उनकी ओर दौड़ता हुआ आया और उन सबको काट लिया ... इसे देखकर राजा आश्चर्य से भर गया कि इतने निरीह से जीव ने उन कुत्तों को काट लिया था जिन्होंने पूर्व में उसके लिए शिकार के तौर पर शेर और बाघ को पकड़ा था। इस प्रकार उसने इसे साधारण हिरण के बजाय किसी विलक्षण शक्ति का स्वरूप माना; ... और नदी पर पहुँचकर उसे तट के किनारे एक भ्रमण करता हुआ साधु मिला ... जिसे उसने सारा क़िस्सा बताया ... और उस साधु ने उसे उस स्थान पर भवन निर्मित करवाने, जिसमें वह रह सके, तथा, एक नगर का निर्माण करने को कहा... और राजा ने ऐसा ही किया।'

इस नगर का नाम उस साधु वैदियजुण (Vyadiajuna; विद्यारण्य, प्रख्यात माधवाचार्य जिसे हरिहर और बुक्का का आध्यात्मिक गुरु माना जाता था) के नाम पर रखा गया था। वह यह भी उल्लेख करता है कि हरिहर प्रथम के द्वारा विरुपाक्ष के विशाल मंदिर का निर्माण भी उस साधु के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए किया गया था। उसके बाद यह विवरण उन राजाओं की जानकारी देता है जो साम्राज्य के संस्थापकों के बाद गद्दी पर बैठे और किस प्रकार सालुव वंश के नरसिंह द्वारा सिंहासन पर कब्ज़ा कर लिया गया, जिसके नाम से ही पुर्तगाली विजयनगर को नरसिंह के राज्य के रूप में जानते थे। इसके अगले भाग में तुलुव वंश की स्थापना के विषय में जानकारी दी गई है, यद्यपि इतिहासकारों ने उसके द्वारा कृष्णदेवराय के भाइयों और नरसा *नायक* द्वारा सिंहासन पर कब्ज़ा कर लेने के प्रसंगों को अन्य स्रोतों के आधार पर प्रश्नांकित किया है।

कृष्णदेवराय के सिंहासनारोहण के बाद उसके ओडिगैर (उदयगिरि), रायचूर और मुद्गल अभियानों की विस्तार से जानकारी दी गई है, विशेष रूप से 'यादलशाओ के नगर राचोल' (रायचूर) के संबंध

में, जो बीजापुर के शासक इस्माइल आदिल शाह के अधीन था। नूनिज़ ने इस युद्ध में विस्तार से पुर्तगालियों द्वारा निभाई गई भूमिका का उल्लेख किया है। रायचूर के दुर्ग पर विजय हासिल कर लेने के बाद राजा द्वारा 'कलबरगरा' (गुलबर्गा) पर भी हमला किया गया और वहाँ बंदी रखे गए बहमनी राजाओं के पुत्रों में से एक को 'डिक्वेम (दक्खन) के राज्य का राजा' घोषित किया गया। यद्यपि वह उल्लेख करता है कि बहमनी सुल्तान के पुत्रों को इस्माइल आदिल शाह द्वारा बंदी बनाया गया था किंतु वास्तव में वे अमीर बरीद द्वारा बंदी बनाए गए थे।

देवराय प्रथम द्वारा विजयनगर के शहर में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराने हेतु निर्मित बाँध का भी नूनिज़ द्वारा उल्लेख किया गया है, किंतु वह उसे किसी 'अजाराओ' के साथ संबंधित समझता है, तथापि उसके द्वारा दिया गया विवरण काफ़ी जीवंत और स्पष्टता लिए हुए है:

> ..राजा इस नगर को और बढ़ाने हेतु तथा राज्य में इसे सर्वश्रेष्ठ बनाने के लिए पाँच लीग[1] की दूरी पर स्थित एक विशाल नदी के पानी को लाने हेतु कृत-संकल्प था, यह विश्वास करते हुए कि यदि वह उसे नगर के भीतर ले आएगा तो इससे अधिक लाभ होगा और उसने ऐसा ही किया। नदी में विशाल चट्टानों की सहायता से बाँध बनाकर, और इस प्रकार लाए गए जल को वह नगर के उन हिस्सों से ले गया जहाँ वह चाहता था, इसके द्वारा उसने इस नगर में कई उद्यानों और बगीचों तथा हरे-भरे उपवनों की स्थापना की और लता-कुंज लगाए, जिनकी इस देश में भरमार है, और नींबू और संतरे और गुलाब तथा अन्य कई पौधे लगाए गए जो इस देश में अत्यधिक अच्छे फल प्रदान करते हैं।
>
> **सीवेल 1991: 301**

वह कृष्णदेवराय द्वारा निर्मित तालाब के विषय में भी जानकारी देता है, इस संबंध में हमने पायस के विवरण का ऊपर उल्लेख किया है। लेकिन नूनिज़ उन पुर्तगाली राज-मिस्त्रियों का भी उल्लेख करता है जिन्हें राजा ने आमंत्रित किया था तथा गोवा के गवर्नर ने इसी आधार पर जाओ डेला पोंटे को भेजा था जो पत्थर का एक उम्दा कारीगर था।

अच्युतराय के शासनकाल के दौरान जब नूनिज़ विजयनगर में था, वह राजा के महल, उसकी 500 पत्नियों, पाँच से छः सौ महिलाओं तथा किन्नरों का उल्लेख करता है जिन्हें महल में सेवकों के रूप में नियुक्त किया गया था, और किस प्रकार अधिकारियों द्वारा इसकी व्यवस्था की जाती थी। उसने भी नौ दिवसीय उत्सव का उल्लेख किया है। यद्यपि उसका विवरण इतना विस्तृत नहीं है, तथापि यह ऐसी कुछ जानकारियाँ उपलब्ध कराता है जिनका उल्लेख पायस के विवरण में नहीं मिलता है, जैसे इस उत्सव के दौरान विभिन्न *नायकों* तथा अधिकारियों द्वारा निभाई जाने वाली भूमिकाओं के विषय में। वह इसे मनाने के पीछे कारण भी बताता है:

> वे इसका आयोजन उन नौ महीनों के सम्मान में करते हैं जिनमें माताएँ अपने पुत्रों को गर्भ में धारण करती हैं। वहीं दूसरे कहते हैं कि इसका आयोजन मात्र इसलिए होता है ताकि *नायक* (कैप्टन) राजा के सम्मुख आकर इस समय अपनी भेंट प्रस्तुत कर सकें।
>
> **सीवेल 1991: 376**

पायस के विवरण की तुलना में इसमें राजनीतिक-प्रशासनिक संस्कृति की विस्तार से चर्चा की गई है (सीवेल 1991: 384-90)। इसके अतिरिक्त 'हिंदुओं' ('heathens') के विश्वासों की चर्चा करते हुए वह 'महिलाओं द्वारा स्वयं को अपने मृत पतियों के साथ जला देने की प्रथा का भी वर्णन करता है' और कैसे इसे सम्मान-पूर्ण ढंग से देखा जाता था। इस समय दंड और न्याय की व्यवस्था किस प्रकार की थी वह इसका भी उल्लेख करता है, जैसे चोरी के अपराध के लिए हाथ या पाँव काटकर दंड दिया जाता था, या किसी सम्मानीय स्त्री का शीलभंग करने पर फांसी का दंड दिया जाता था। कुलीनों या अधिकारियों द्वारा किए जाने वाले द्रोह का दंड 'उन्हें लकड़ी की सूली पर पेट के बल लटका कर' दिया जाता था (सीवेल 1991: 383)। हिंदुओं के धार्मिक विश्वासों की चर्चा करते हुए वह उनके द्वारा ब्राह्मणों और गायों को दिए जाने वाले सम्मान का उल्लेख करता है और उनका 'तीन पवित्र आत्माओं और केवल एक ईश्वर' पर विश्वास का उल्लेख करता है, स्पष्ट है वह इस संबंध में भ्रम में था।

[1]दूरी नापने की इकाई; 1 लीग (league) = 3 मील (miles)

1) डोमिंगो पायस द्वारा दिए गए विजयनगर के विवरण की चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

2) नूनिज़ द्वारा उपलब्ध कराए गए ऐतिहासिक विवरण की जानकारियों का क्या महत्व है?

.....

.....

.....

3) नूनिज़ और पायस के वृत्तांतों से हम राजसत्ता के विषय में क्या जान सकते हैं?

.....

.....

.....

4) पुर्तगाली यात्रियों के विवरणों में झलकने वाली विजयनगर की आर्थिक स्थितियों पर एक संक्षिप्त लेख लिखिए।

.....

.....

.....

16.4 सर टॉमस रो

रो जहाँगीर के दरबार में आने वाला सर्वाधिक विख्यात अंग्रेज़ था, जो 1615 सी ई में सूरत के पत्तन पर इंग्लैंड के राजा जेम्स प्रथम का मुग़ल बादशाह जहाँगीर के नाम ख़त लेकर आया था, जिसमें एक व्यापारिक समझौते की उम्मीद थी, चूँकि वह साथ ही में ईस्ट इंडिया कम्पनी के लिए भी कार्य कर रहा था। रो जनवरी 1616 में अजमेर में शाही दरबार में उपस्थित हुआ तथा अगस्त 1618 तक वहाँ रहा और फ़रवरी 1619 में उसने इंग्लैंड वापसी की यात्रा शुरू की।

इस राजदूत ने मुग़ल दरबार में चार वर्ष व्यापार-संबंधी समझौता करने के प्रयास में बिताए। इस दौरान न केवल उसने एक विस्तृत ब्योरा दर्ज किया, बल्कि अपने निजी और व्यवसायिक संपर्कों, तथा साथ ही जेम्स प्रथम को भी पत्र लिखे। भारत में उसकी मौजूदगी और बादशाह के साथ उसके संबंधों के विवरण बाद में हैक्लुयट (Hakluyt) सोसाइटी द्वारा प्रकाशित किए गए थे।

टॉमस रो द्वारा स्वदेश भेजे गए पत्राचार दो तरह के पाठकों को संबोधित थे, इनमें से एक पाठक वर्ग ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकारी थे और दूसरे पाठक चुनिंदा आधिकारिक और शाही वर्ग से संबंधित थे। 17वीं शताब्दी के मुग़ल दरबार और इसके दस्तूर तथा राजनीतिक संस्कृति का उसका विस्तृत विवरण कुलीन तथा शाही पाठक-वर्ग को संबोधित था। बैनर्जी (2017: 161) यह तर्क देती हैं कि, 'रो मुग़ल भारत को कुछ ऐसे गुणों के साथ परिभाषित करना चाहता था जो उस समय के जैकोबियन इंग्लैंड, और कहें तो यूरोप, के बिल्कुल विपरीत थे।' उसके द्वारा समरूपता के चिह्न को अनदेखा करना उसके द्वारा 'स्वयं' में अवांछित तत्वों को प्राच्य के 'अन्य' (oriental 'other') में आरोपित करने का संकेत करता है। चिदा-रज़वी (2014: 266, 268) यह संकेत करती हैं कि रो की दोहरी भूमिका में अंतर्निहित विरोधाभास ने उसे मुग़ल दरबार में स्वयं की शक्तिशाली स्थिति होने की छवि पेश करने को मजबूर किया। मुग़ल व्यापार और कूटनीति के लिए इंग्लैंड की एक मामूली से देश की हैसियत यहाँ पहुँचने पर रो के सम्मुख स्पष्ट हो चुकी थी, इसने भी उसके स्वयं के तथा मुग़लों के वर्णन को प्रभावित किया।

शाही दरबार में प्रथम उपस्थिति का ब्यौरा देते हुए वह दरबारी रीतियों तथा पदानुक्रम की व्यवस्था और बादशाह के रोज़ाना के नित्यक्रम का संक्षिप्त विवरण देता है। इस विवरण में यह देखा जा सकता

है कि किस प्रकार वह बादशाह और उसके दरबारियों की एक नाटकीय छवि पेश करता है। जहाँगीर के दरबार या राज-सभा की यह छवि न केवल हमें यह बताती है कि दरबार किस प्रकार आयोजित होता था बल्कि यह बोध भी कराती है कि रो किस तरह यह दिखाना चाहता था कि यह सारी शक्ति और भव्यता वास्तविक नहीं थीः

> राज्य, सरकार, युद्ध और शांति के निपटारे के संबंध में कोई भी कार्य वहाँ नहीं किया गया, किंतु पूर्व में बताए गए दो स्थानों में से एक में वह सार्वजनिक रूप से इसकी घोषणा और इसका समाधान करता था और इसे दर्ज किया जाता था, जिसे अगर जिज्ञासा हो तो मात्र दो शिलिंग (shillings) देकर वह इसे देख सकता था, किंतु आम लोग भी उतना ही जानते थे जितना कि राजसभा के सदस्य और हमेशा किसी दुष्ट व्यक्ति द्वारा बादशाह के नए संकल्पों को तोड़ने और उनका तिरस्कार करने की ख़बरें यहाँ पहुँचती थीं। यह दिनचर्या अपरिवर्तनीय थी, केवल बीमारी और नशे की स्थिति ही इसमें बाधा पैदा करती थी, जिसके बारे में अवश्य ही पहले से पता होना चाहिए क्योंकि उसकी समस्त प्रजा गुलामों की तरह है, इस प्रकार वह भी बदले में एक तरह के बंधन से बंधा है, क्योंकि वह इन प्रथाओं और रीतियों का उपयुक्त तरीके से पालन करने के लिए बाध्य है कि किसी दिन यदि वह नज़र ना आए और इसका कोई पर्याप्त कारण न बताया जाए तो लोग विद्रोह कर बैठेंगे; दो दिन तक तो किसी भी कारण से इस दिनचर्या को बाधित नहीं किया जाता, बल्कि उसे अपने दरवाज़ों को खोलने और कुछ लोगों को नज़र आने हेतु सहमति देनी होती थी ताकि सबके मन में संतोष बना रहे।
>
> **रो 1899: 106**

टॉमस रो ने विस्तार से मुग़ल दरबार तथा जहाँगीर की दिलचस्पियों का वर्णन किया है। जहाँगीर के लघु छविचित्र से बंधी हुई एक चार इंच की स्वर्ण ज़ंजीर महत्वपूर्ण अमीरों/कुलीनों को उपहार में दी जाती थी, अमीर वर्ग इस ज़ंजीर को अपनी पगड़ी में बाँधे रखते थे, रो को भी बादशाह का यह लघु-छवि चित्र प्रदान किया गया था। उसने बादशाह के धार्मिक विश्वासों के विषय में भी लिखा है। टॉमस रो के विवरण का उल्लेख इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह बादशाह के धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण पर प्रकाश डालता है। इसके अनुसार बादशाह सभी धर्मों के प्रति सहिष्णु था किंतु वह धर्म परिवर्तन को पसंद नहीं करता था (रो 1899: 314)। वह दानियाल के पुत्रों के ईसाई धर्म में धर्मांतरण का भी उल्लेख करता है किंतु इसका जो वह कारण बताता है, वह जहाँगीर द्वारा पुर्तगाली पत्नी की इच्छा रखना था। सर टॉमस रो ने यह लिखा है कि एक बार जहाँगीर जयपुर के निकट टोडा नामक स्थान पर एक भिक्षु से मिला। जहाँगीर ने उस भिक्षु से बड़े ही प्रेम-भाव, दया और विनम्रता के साथ बात की, जैसा किसी राजा में आसानी से दिखाई नहीं पड़ता, उसने उसे अपनी बाहों में भर लिया, जबकि कोई भी साफ़-सुथरा व्यक्ति उसे छूने का भी साहस नहीं करता और तीन बार उसके हाथ को लेकर अपनी छाती पर रखा और उसे अपना पिता कहकर पुकारा (रो 1899: 366)। इस विवरण में हम न केवल जहाँगीर की ग़ैर-इस्लामी विश्वासों के प्रति स्वीकार्यता देखते हैं, बल्कि उनके प्रति श्रद्धा भी देखते हैं, जो रो के लिए काफ़ी विचित्र सी बात थी।

पादशाह द्वारा शिकार के भोज को बाँटना उसकी अनुकंपा का प्रतीक था। जहाँगीर ने इस प्रकार का अनुग्रह रो पर कई बार दिखाया था। इसके अतिरिक्त रो ने बादशाह के *झरोखा दर्शन* का भी बड़ा ही दिलचस्प वर्णन प्रस्तुत किया है। उसके वर्णन से यह पता चलता है कि शाही महिलाएँ भी *पादशाह* के साथ दर्शन के समय उपस्थित रहती थीं, वह पीछे एक 'जालीदार खिड़की' में बैठी रहती थीं (रो 1899: 320)। रो बादशाह के साथ उसके जन्मदिन के उत्सव पर, दो मौकों पर आगरा और माँडू में, मौजूद रहा था और उसने बादशाह के सामने स्वर्ण जड़ित आसन से युक्त तथा हीरों व सोने की ज़री के काम वाले लहराते झंडों के साथ बारह हाथियों को गुज़रते देखा, हाथियों ने बादशाह को 'मनोहारी ढंग से झुक कर सलाम किया'। इसके बाद *तुलादान* का समारोह आयोजित हुआ, बादशाह को सोने, चाँदी, हीरे, रत्नों, रेशम तथा ज़री के कपड़ों और मसालों, आदि से तोला गया।

रो कहता है कि 'यद्यपि शराब का नशा एक आम और गौरव-पूर्ण बुराई है और राजाओं की आदत है, तब भी यह इतनी कठोरता से प्रतिबंधित था कि कोई भी व्यक्ति *गुज़ेलकान (गुसलख़ाना)* में, जहाँ बादशाह बैठता था, शराब पीकर दाखिल नहीं हो सकता था'। अगर कोई व्यक्ति ऐसा करने का प्रयास करता तो उसे कोड़ों के साथ पीटा जाता। कोड़ा 'एक भयंकर हथियार था जिसमें चार मुँह वाली गाँठ होती थी और प्रत्येक वार पर चार घाव हो जाते थे'। इस वर्णन में रो जहाँगीर के चरित्र में विद्यमान विसंगतियों की चर्चा करता है।

रो ने युद्ध में जाने से पूर्व बादशाह द्वारा शस्त्र धारण करने के समारोह का उल्लेख किया है और शिविर में *पादशाह* के पहुँचने का भी ज़िक्र किया है। सैन्य शिविर (*लश्कर*) क्षेत्र का वर्णन करते हुए वह लिखता है कि, 'वहाँ हर प्रकार की दुकानें थीं, इस प्रकार व्यवस्थित कि उन्हें "विशेष रूप से पहचाना" जा सकता था कि कहाँ से क्या खरीदना है और संभवतः यह आकार में यूरोप के किसी बड़े से बड़े नगर के समान होता था' (रो 1899: 363)।

उसने खुसरो के प्रसंग, उसकी लोकप्रियता तथा उसके पिता का उसके प्रति प्रेम का वर्णन भी किया है। वह लिखता है कि खुर्रम, नूरजहाँ, आसफ ख़ान तथा एत्माद-उद-दौला अपनी मर्ज़ी से चला करते थे, खुर्रम हर चीज़ पर नियंत्रण पाता जा रहा था, उन्होंने साथ में मिलकर खुसरो के ख़िलाफ़ षड्यंत्र किया। वह लिखता है यह 'बेचारा शाहज़ादा शेर के पंजों के बीच फँस चुका था, उसने खाना और पीना छोड़ दिया और चाहता था कि उसके पिता उसकी हत्या कर दें ताकि वह अपने शत्रुओं के विजय तथा आनंद का कारण न बने' (रो 1899: 294)। समस्त दरबार में कानाफूसी, अफ़वाह फैलने लगी और परिस्थिति काफ़ी मुश्किल बन गई। उसे दरबार में नूरजहाँ के समूह द्वारा प्राप्त शक्ति का भी अहसास था। उसने जहाँगीर पर नूर महल के प्रभाव की आलोचना करते हुए लिखा है: 'एक औरत न केवल हमेशा एक परेशानी होती है बल्कि आमतौर पर वह सबसे बड़ा नशा और सबसे अधिक दुष्ट होती है और वह दर्शाती है कि वह सामान्य तौर पर काम करने के योग्य नहीं है और न ही वह स्वयं किसी प्रकार की योग्यता या सूक्ष्म दृष्टि से सम्पन्न होती है' (रो 1899: 364)।

बोध प्रश्न-3

1) रो द्वारा वर्णित जहाँगीर के दरबार के वर्णन की विशेषताएँ क्या हैं?

.....

.....

.....

2) रो ने जहाँगीर के धार्मिक व्यवहार को किस प्रकार देखा था?

.....

.....

.....

16.5 फ़्रांसिस्को पेल्सार्ट

पेल्सार्ट एक डच फ़ैक्टर (Factor; *गुमाश्ता*) था जो जहाँगीर के काल में आगरा में रहा था। उसने भारतीय उपमहाद्वीप में कई स्थानों की सामाजिक और आर्थिक स्थितियों का बहुत ही रोचक विवरण दिया है। उसका विवरण एक प्रकार की रिपोर्ट है, जो उसके द्वारा किए गए अनुभवों और अन्वेषणों पर आधारित है। उसने इसे डच कंपनी के निदेशकों के पास भेजा ताकि यह उन्हें दक्षिण एशिया और यूरोप के बीच व्यापार से डचों के लाभान्वित होने की संभावना जानने में मदद कर सके। उसकी रिपोर्ट में आगरा शहर, आगरा और देश के पूर्वी हिस्से की व्यापारिक गतिविधियों, उत्तर भारत में डच व्यापार, बुरहानपुर और गुजरात की व्यावसायिक स्थिति, मुग़ल प्रशासन, समाज के निचले वर्गों के साथ ही अभिजात्य वर्ग के जीवन की परिस्थितियों तथा हिंदुओं की धार्मिक प्रथाओं का विवरण है।

पेल्सार्ट ने मसूलीपट्टनम से भारत में प्रवेश किया और पूरे उपमहाद्वीप के उत्तरी और पश्चिमी भागों में उत्पादन और व्यापार से संबंधित अधिकांश महत्वपूर्ण स्थानों का भ्रमण किया। गुजरात के बारे में लिखते हुए, उसने उत्पादन के कई केंद्रों, वहाँ उत्पादित कपड़े की कई किस्मों, पटना और बंगाल या मालाबार जैसे दूरदराज़ के स्थानों से कच्चे माल के आयात और गुजरात के दक्षिण-पश्चिम में स्थित कस्बों के बारे में लिखा है।

कुछ अन्य महत्वपूर्ण केंद्रों का भी पेल्सार्ट द्वारा उल्लेख किया गया है, जैसे लाहौर का उल्लेख मध्य एशियाई व्यापार और उससे आगे के व्यापक क्षेत्र के लिए अतीत काल से ही प्रमुख व्यापारिक केंद्र के रूप में किया है। मुल्तान और थट्टा वस्त्र, शक्कर, नील तथा गंधक के उद्योगों के लिए प्रसिद्ध थे। उसने कश्मीर की भी यात्रा की तथा वहाँ के लोगों, महत्वपूर्ण उत्पादों, घरों तथा लोगों की दयनीय

स्थिति का विवरण दिया है, उसने वहाँ उत्पादित होने वाले केसर व विभिन्न प्रकार के फलों के विषय में भी लिखा है।

पेल्सार्ट ने आगरा का बहुत ही रोचक वर्णन किया है। उसने शहर की संरचना, अमीरों और गरीबों के घर, उनके खान-पान, विभिन्न वस्तुओं के बाज़ार और वहाँ उपलब्ध विभिन्न प्रकार की वस्तुओं के बारे में लिखा है। उसने आगरा को उत्पादन के महत्वपूर्ण केंद्रों से जोड़ने वाले सभी मार्गों का उल्लेख किया है। उसने वहाँ के प्रसिद्ध भवनों की संरचनाओं का भी उल्लेख किया है, जैसे *मदारी दरवाज़ा, चहारसू दरवाज़ा, नीम दरवाज़ा, नूरी दरवाज़ा* (उनके अनुसार इन सभी द्वारों का निर्माण अकबर द्वारा किया गया था), शाहबुर्ज (शाही दुर्ग, 'जो अपनी भव्यता के साथ-साथ लागत में भी दुनिया की सबसे प्रसिद्ध इमारतों को भी मात देता था'), *गुसलख़ाना,* नूरजहाँ बेगम का महल, चार बाग़ और मोती महल नामक दो उद्यान तथा और भी कई संरचनाओं की चर्चा पेल्सार्ट ने की है। 'किले के भीतर खाली स्थान बहुत ही कम हैं या हैं ही नहीं, यह विभिन्न उभरी हुई इमारतों और आवासों के साथ-साथ महलों, या महिलाओं के लिए आवासों से पूरी तरह घिरा हुआ है। इनमें अकबर की पत्नी और जहाँगीर की माँ मरियम मकानी का महल भी है, साथ ही तीन अन्य महल भी हैं ...' (पेल्सार्ट 1925: 3)। उसके विवरण में उल्लिखित पूर्वी (*पूरोप*) व्यापार केंद्र हैं: जौनपुर (बड़ी मात्रा में कपास के सामान का उत्पादन और निर्यात), बनारस (हिंदू महिलाओं के लिए कमरबंद, पगड़ी, कपड़े, ताँबे के बर्तन, बेसिन (basins) और हिंदू घरों में उपयोग के लिए अन्य वस्तुएँ भी उत्पादित करता है), अवध (मोटे कपड़े का उत्पादन), लखावर (बेहतर सफ़ेद कपड़ा), पटना (रेशम, मलमल), बंगाल में चबासपुर और सोनारगाँव (उच्च गुणवत्ता वाले मलमल का उत्पादन करता है) (पेल्सार्ट 1925: 7-8)।

पेल्सार्ट ने आगरा में मसालों के व्यापार के बारे में जो लिखा है, उससे पता चलता है कि उसकी दृष्टि कितनी तीक्ष्ण थी तथा समझ कितनी स्पष्ट थी। भारतीय व्यापारियों द्वारा मसालों के व्यापार में डच व्यापारियों के साथ प्रतिस्पर्धा हेतु प्रयुक्त होने वाली विभिन्न विधियों का वर्णन किया गया है। वह हमें बताता है कि आगरा के बाज़ार में किन मसालों को व्यापार हेतु लाया जाता था। इसके बाद वह डच कम्पनी को सुझाव देता है कि किस प्रकार व्यापार को संगठित किया जाए जिससे अधिकतम लाभ हो तथा इस लाभ को नील और भारतीय वस्त्रों के व्यवसाय में लगाया जाए।

नील के उत्पादन, और विशेष रूप से बयाना में नील के उत्पादन, के बारे में उसने जो लिखा है, इस संदर्भ में पेल्सार्ट का कोई सानी नहीं है। बयाना में प्रयुक्त नील की उत्पादन-विधियों के बारे में उपलब्ध जानकारी का उपयोग मध्यकालीन भारतीय और ब्रिटिश तकनीकों की तुलना करने के लिए किया जा सकता है। उनका वर्णन है कि आम तौर पर फसल जून में बोई जाती है, बारिश के मौसम से पहले, और सर्दी के मौसम से पहले फसल काट ली जाती है ताकि यह अपना रंग न खोए। वह लिखता है:

> ...प्रत्येक *हौज़* (*put*) में लगभग एक बीघा की उपज डाली जाती है, और 16 से 17 घंटे के लिए उसे भीगने के लिए छोड़ दिया जाता है, यह *पुत* लगभग 38 फ़ीट गहरा होता है। अपने परिमाप और इसकी गहराई में यह एक सामान्य व्यक्ति की ऊँचाई का होता है; फिर पानी को एक गोल *पुत* में निकाल दिया जाता है, जो कुछ निचले स्तर पर बना होता है, जिसकी परिधि 32 फ़ीट और गहरायी छः फ़ीट होती है, *पुत* में खड़े हुए दो या तीन व्यक्ति नील को हाथों से आगे-पीछे करते हैं, और इस लगातार चलाने से नीला रंग पानी में अवशोषित हो जाता है। इसे फिर से 16 घंटों के लिए छोड़ दिया जाता है, इस दौरान इसका माल या निचोड़ *पुत* की तली में स्थित एक कटोरे के आकार के एकत्रण पात्र में बैठ जाता है, तब निकास द्वारा पानी को बहा दिया जाता है ... नील जो नीचे बैठ गया है ... उसे सूती वस्त्रों में छोड़ दिया जाता है जब तक कि यह साबुन की तरह दृढ़ न हो जाए, तब इसकी गोलियाँ बना ली जाती हैं।
>
> **पेल्सार्ट 1925: 11**

सामाजिक परिस्थितियों की चर्चा करते हुए, वह समाज के निचले तबके की खराब स्थितियों पर ध्यान केंद्रित करता है। उसके अनुसार कर्मकार (दस्तकार), नौकरों और दुकानदारों के तीन वर्गों की स्थिति स्वैच्छिक दासता की स्थिति से बहुत भिन्न नहीं है। कामगारों की दो समस्याएँ होती हैं, एक, कम मजदूरी, और दूसरी है 'गवर्नर, कुलीनों, *कोतवाल, बख्शी* और अन्य शाही अधिकारियों द्वारा उत्पीड़न'। इन कुलीनों के लिए उन्हें या तो बिना किसी पारिश्रमिक के या बहुत कम भुगतान के लिए काम करना पड़ता है। इसी तरह, नौकरों, 'जिनकी संख्या इस देश में बहुत अधिक होती है', उनके

कर्तव्यों को घर और बाहर, दोनों, में अच्छी तरह से परिभाषित किया गया है, उन्हें भी अच्छी तरह से भुगतान नहीं किया जाता है, और 'उनकी मजदूरी अक्सर कई महीनों से बकाया रहती है, और फिर फटे-पुराने कपड़े या अन्य चीज़ें देकर भुगतान किया जाता है'। हालांकि, 'दुकानदारों को दस्तकारों की तुलना में अधिक सम्मान दिया जाता है और उनमें से कुछ तो संपन्न भी होते हैं'। लेकिन, वे भी कुलीन वर्ग की सनक और मनमाने व्यवहार के शिकार हैं (पेल्सार्ट 1925: 64)।

बोध प्रश्न-4

1) पेल्सार्ट ने आगरा शहर का वर्णन किस प्रकार किया है?

.....

.....

.....

2) उस समय की सामाजिक परिस्थितियों के बारे में हम पेल्सार्ट के वृत्तांत से क्या जान सकते हैं?

.....

.....

.....

16.6 जीन बैप्टिस्ट टैवर्नियर

जीन बैप्टिस्ट टैवर्नियर सत्रहवीं शताब्दी का सबसे प्रसिद्ध फ्रांसीसी यात्री था। वह पेशे से जौहरी था और शाहजहाँ के शासनकाल में भारत आया था। वह एक अनुभवी और साहसी यात्री था और यात्रा के ख़तरों से नहीं डरता था। उसने पूर्व की सात यात्राएँ की थीं, जिनमें से छः बार वह भारत आया था। ये यात्राएँ 1641-1642; 1645-1647; 1651-1654; 1657-1661; तथा 1665-67 के दौरान की गई थीं। अपनी पहली दो यात्राओं के दौरान टैवर्नियर ने लगभग पूरे भारत को खंगाल डाला था। अपनी पहली यात्रा के दौरान उसने सूरत, बुरहानपुर, आगरा, ढाका, गोवा और गोलकुंडा की यात्रा की। गोलकुंडा में उसने हीरे की खदानों के बारे में पूछताछ की और संभवतः खदानों को देखा भी था।

अपनी दूसरी यात्रा के दौरान वह दौलताबाद-नांदेड़ मार्ग से गोलकुंडा पहुँचा और वहाँ की हीरे की खानों के अलावा उसने दखलाकोंडा (आधुनिक रामलकोट) और गनी या कोल्लूर की खानों का भी दौरा किया। अपनी तीसरी यात्रा के दौरान उसने पूर्वी तट पर मसूलीपट्टनम, मद्रास, गंडीकोट, आदि स्थानों का दौरा किया और वहाँ से वह अपने जवाहरात बेचने के लिए गोलकुंडा की ओर निकल गया। उच्च मूल्य के कारण यह सौदा नहीं हो सका और वह जल्द ही यहाँ से सूरत के लिए रवाना हो गया। सूरत में उसे गुजरात के सूबेदार शाइस्ता ख़ान से अहमदाबाद आने का निमंत्रण मिला। यहाँ से वह फिर से औरंगाबाद मार्ग से गोलकुंडा और आसपास के स्थानों की हीरे की खदानों में व्यापार करने के उद्देश्य से गया और उसी वर्ष सूरत लौट आया।

1657 में वह फिर से भारत आया और इस यात्रा का उद्देश्य शाइस्ता ख़ान द्वारा मँगाए गए सामानों की आपूर्ति करना था, उसके पास कुछ दुर्लभ वस्तुएँ थीं जिन्हें उसने शाइस्ता ख़ान को बेचा। उस समय शाइस्ता ख़ान दक्खन की घेराबंदी कर रहा था। अपना काम पूरा करने के बाद टैवर्नियर ने फिर से गोलकुंडा की ओर रुख किया, और यहाँ से 1660 या 1661 की शुरुआत में फिर से सूरत चला गया। इस समय तक टैवर्नियर ने पर्याप्त समृद्धि हासिल कर ली थी। घर लौटने पर, उसे उसकी सेवाओं के लिए लुई XIV द्वारा उच्च कुलीन की उपाधि से सम्मानित किया गया। उसने जिनेवा के पास औबोन की बैरोनी (barony) खरीदी और वहाँ आराम और ऐश्वर्य के साथ रहने लगा। यहीं पर उसने अपना विवरण प्रकाशित करने के विषय में विचार किया। 1675 में उसका विवरण *नोवेल रिलेशन डू सीरसिल्डा ग्रैंड सिग्नेयर* शीर्षक के साथ प्रकाशित हुआ, और *द सिक्स वॉयेजेज़* को अगले वर्ष प्रकाशित किया गया। ये पुस्तकें जल्द ही अंग्रेज़ी, जर्मन और इतालवी (Italian) भाषाओं में प्रकाशित हुईं और लोकप्रिय हो गईं।

अपनी अंतिम यात्रा में उसके पास व्यापार करने के लिए कई क़ीमती सामान थे। बुरहानपुर, सिरोनी, ग्वालियर, आगरा होते हुए वह जहानाबाद पहुँचा और औरंगजेब तथा उसके महत्वपूर्ण अमीरों से

मुलाकात की। वह अपने सबसे क़ीमती रत्नों को *पादशाह* को बेचने में सफल रहा था। दो महीने जहानाबाद में रहने के बाद वह फिर आगरा चला गया और यहाँ से सूरत लौट आया। यह उसकी आख़िरी यात्रा थी। यह तथ्य कि टैवर्नियर बहुत लंबे समय तक भारत में रहा था, भारत के प्रमुख व्यापार केंद्रों के विषय में उसके द्वारा उपलब्ध विवरणों से भी प्रमाणित होता है। इसलिए, उसकी इस यात्रा का सत्रहवीं शताब्दी के मुग़ल इतिहास में बहुत महत्व है। लेकिन हमें यह भी याद रखना चाहिए कि उसका उद्देश्य भारत के लोगों और क्षेत्रों का अवलोकन और अध्ययन करना नहीं था। एक व्यापारी की दृष्टि से उसने जो कुछ भी महत्वपूर्ण समझा, उसने केवल उन्हीं चीज़ों पर ध्यान केंद्रित किया है। उसका ध्यान अपनी व्यापारिक सौदेबाज़ियों की सफलताओं का उल्लेख करने पर अधिक है, लेकिन इसी प्रवृत्ति के कारण, वह भारत में व्यापारियों, साहूकारों और *सर्राफ़ों* द्वारा व्यावसायिक गतिविधियों में उपयोग की जाने वाली तरकीबों और तरीकों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी देता है। वह *सर्राफ़ों* की बचत की अत्यंत सचेत प्रकृति पर टिप्पणी करते हुए लिखता हैः

> ... शुद्धता की जाँच कर लिए जाने के बाद कसौटी पर जितना भी सोना बचा रहता है, जिसके बारे में यहाँ कोई सोचता भी नहीं है, जिसकी मात्रा इतनी कम होती है कि उसके बर्बाद चले जाने के बारे में चिंता नहीं की जाती है, ये लोग इसे भी एक गेंद की सहायता से इकट्ठा कर लेते हैं, जो आधी काली राल की तथा आधी मोम की बनी होती है, इससे वे उस पत्थर को घिसते हैं जिसमें सोना लगा रहता है, और कुछ सालों के बाद वे इस गेंद को जला देते हैं तथा इस प्रकार एकत्र हुआ सोना प्राप्त कर लेते हैं, यह गेंद हमारे टेनिस कोर्ट में प्रयोग होने वाली गेंद के आकार की होती है, और पत्थर वैसा ही होता है जैसा अक्सर सुनार प्रयोग करते हैं।
>
> **टैवर्नियर, भाग IIः 29-30**

सर्राफ़ों के महत्व पर टिप्पणी करते हुए टैवर्नियर लिखता है, 'सभी यहूदी लोग जो ग्रैंड सिन्योर (Grand Seigneur) के साम्राज्य में धन और विनिमय के मामलों में बहुत ही कुशाग्र माने जाते है, लेकिन भारत में, वे शायद इन विनिमयकर्ताओं के सामने नौसिखिए ही प्रतीत होंगे ...' (टैवर्नियर भाग II: 24)। उसने कुछ व्यापारिक वस्तुओं, जैसे मसाले, कस्तूरी, नील, हाथीदाँत, आदि के उत्पादन और बिक्री में उपयोग की जाने वाली विधियों का भी वर्णन किया है, जो भारतीय वाणिज्य प्रथाओं के इतिहास के ज्ञान के दृष्टिकोण से बहुत महत्वपूर्ण है। एक अनुभवी और विशेषज्ञ व्यापारी द्वारा लिखा जाने के कारण इस विवरण का महत्व और अधिक स्पष्ट हो जाता है। उसका रत्नों और मोतियों का वर्णन बहुत सटीक और स्पष्ट है।

टैवर्नियर ने लगातार लोगों को बताया कि वह फ्रांस और फ़ारस के सम्राटों के संरक्षण में यात्रा कर रहा था। इससे उसे शाही दरबार के अमीरों/कुलीनों और उच्च अधिकारियों के साथ बैठने और संपर्क करने का अवसर मिला था। उसे राजकोष के जवाहरात, आदि का मूल्यांकन करने के लिए बुलाया गया था। कोहिनूर का दिलचस्प और विशद् विवरण इस कारण से उपलब्ध हुआ कि उसे कोहिनूर को देखने और उसका परीक्षण करने का पूरा अवसर मिला। उसने मुग़ल साम्राज्य के प्रमुख कुलीनों, जैसे शाइस्ता ख़ान, का विवरण दिया है, और यह भी कि उन्होंने कीमती रत्नों की बिक्री के लिए कैसे बातचीत की, जो कि बहुत दिलचस्प है, जिसका उसने उल्लेख भी किया है। उसके द्वारा मीर जुमला के प्रशासनिक कौशल और व्यापार करने के विशिष्ट तरीके का भी उल्लेख किया गया है। उसने *वज़ीर* ज़फ़र ख़ान और उसकी बुद्धिमान पत्नी के बारे में भी दिलचस्प जानकारी दी है।

टैवर्नियर के विवरण से मुग़ल दरबार और सैन्य व्यवस्था के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इसका विवरण *क़ाज़ी* के पद और न्याय-प्रशासन, चुँगी भवन (octroi house) और अधिकारियों, आदि के बारे में भी बहुत महत्वपूर्ण है। टैवर्नियर विदेशी शक्तियों और उनके प्रतिनिधि कर्मचारियों के विभिन्न संदर्भ भी प्रदान करता है जो पूर्वी व्यापार में एक दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा करते थे।

उसके विवरण में हमें मथुरा के केशवदेव, बनारस के विश्वनाथ, पुरी के जगन्नाथ और तिरुपति मंदिर के भी दिलचस्प विवरण मिलते हैं। उस समय के इन मंदिरों की स्थापत्य शैली को न केवल उसके विवरण से जाना जा सकता है बल्कि वहाँ होने वाले अनुष्ठानों, इन मंदिरों की आय का भी उल्लेख हमें मिलता है। लेकिन वह केवल धार्मिक रीति-रिवाज़ों के बाहरी पक्ष पर ध्यान देता है, 'मूर्तिपूजा', 'बेचारे मूर्तिपूजक', 'शैतानों की पूजा', आदि की अपनी पूर्वकल्पित धारणाओं के दायरे से वह बाहर नहीं निकल सका है (टैवर्नियर भाग IIः 225-237)। इसी तरह हिंदू त्योहारों और उत्सव-यात्राओं का

वर्णन भी बहुत दिलचस्प है। उसने सूफ़ी संतों के समूहों और समुदायों और उनके जीवन व अन्य तथ्यों का विवरण भी प्रदान किया है।

अधिकांश यूरोपीय लोगों की तरह, उसने ***सती*** होने की रीतियों का विवरण देने में बहुत रुचि दिखाई है। उसका कहना है कि *सती* करने के लिए *सूबेदार* की अनुमति की आवश्यकता होती है। *सती* संस्कार के तीन तरीके थे जिनको उसने भारत में देखा था – गुजरात राज्य में, और आगरा व दिल्ली तक के क्षेत्र में, बंगाल में, तथा कोरोमंडल के राज्य में। वह इस प्रथा का इस प्रकार वर्णन करता है:

> भारत के मूर्तिपूजकों में एक प्राचीन रिवाज़ यह भी है कि एक आदमी की मृत्यु होने पर उसकी विधवा कभी पुनर्विवाह नहीं कर सकती; इसलिए, जैसे ही उसकी मृत्यु हो जाती है, वह अलग होकर अपने पति के लिए रोना शुरू कर देती है, और कुछ दिनों बाद उसके बाल मुँडवा दिए जाते हैं, और वह अपने उन सभी गहनों को नष्ट कर देती है, जिनसे वह सुशोभित रहती थी, वह अपने हाथों और पैरों से उन कंगनों को उतार देती है जो उसके पति ने उसे दिए थे, जब उसने विवाह में उसे स्वीकार किया था, एक संकेत के रूप में, ये गहने अपने पति के प्रति उसके समर्पण तथा दासता का प्रतीक थे, और वह अपना शेष जीवन बिना किसी उद्देश्य के, उसी स्थान पर, जहाँ वह पहले मालकिन थी, दास से भी बदतर स्थिति में बिताती है। यह दयनीय स्थिति उसे जीवन से घृणा करने को मजबूर बनाती है, और वह अंतिम संस्कार के निमित्त तैयार चिता पर अपने मृत पति के शरीर के साथ जीवित भस्म हो जाने के लिए चढ़ना पसंद करती है, बजाय कि अपने शेष जीवन को पूरी दुनिया के द्वारा दिए गए कलंक और तिरस्कार के साथ जीने के। **टैवर्नियर, भाग II: 209**

टैवर्नियर के विवरण में कुछ त्रुटियाँ हैं, उदाहरण के लिए, वह बहमनी साम्राज्य के विखंडन के परिणामस्वरूप विजयनगर साम्राज्य के उदय होने का वर्णन करता है। इसके अलावा वह कई ऐसी घटनाओं का साक्षी होने का दावा करता है जो वास्तव में उसने नहीं देखी थीं। उसका बीजापुर का विवरण भी संदिग्ध है, वह कभी बीजापुर नहीं गया था।

जिस अवधि के दौरान वह भारत में था, वह डचों के व्यापार में वृद्धि की अवधि थी, टैवर्नियर के विचार में (भाग I: 188), डचों ने अपने दक्ष नेतृत्व में एशियाई सेना को रखने के लाभों को महसूस किया था, उसने अपने विवरण में स्पष्ट रूप से कहा है कि डच दक्षिण भारत में एक प्रमुख शक्ति के रूप में उभर रहे थे। कुल मिलाकर, टैवर्नियर के वृत्तांत मुग़ल साम्राज्य के इतिहास के पुनर्निर्माण के लिए, विशेष रूप से आर्थिक इतिहास के ज्ञान के लिए, बहुत महत्वपूर्ण हैं।

बोध प्रश्न-5

1) मध्यकालीन आर्थिक परिस्थितियों को समझने के लिए टैवर्नियर के विवरण के महत्व का समालोचनात्मक आकलन कीजिए।

.....

.....

.....

2) टैवर्नियर ने भारतीय धार्मिक प्रथाओं को कैसे देखा?

.....

.....

.....

16.7 फ्रंस्वा बर्नियर

बर्नियर के सुविख्यात अभिकथन थे कि 'एशियाई राज्यों में भूमि में निजी संपत्ति का अभाव था, या वंशानुगत कुलीन वर्ग और व्यक्तिगत रूप से राजा यहाँ अत्याचारी और मनमाने ढंग से शासन करते थे' (तांबिया 1998: 362)। उसके इन दावों को समझने के लिए हमें उस पृष्ठभूमि में जाना होगा जहाँ से बर्नियर भारत आया था, और इसने भारत के बारे में उनकी धारणाओं को कैसे प्रभावित किया था। बर्नियर को अन्य यूरोपियों द्वारा एक बेहतर औपचारिक शिक्षा प्राप्त होने के लिए जाना जाता था: वह जूई (Joue, अंजौ [Anjou] के क्षेत्र में) में पैदा हुआ, उसने 1640 के दशक

में पेरिस में समय बिताया था, कुछ समय के लिए कॉलेज रॉयल में गणित के प्रोफ़ेसर, प्रसिद्ध दार्शनिक पियरे गैसेंडी (Pierre Gassendi) के साथ उसने अध्ययन किया था, जर्मनी और इटली की यात्रा के बाद, बर्नियर 1650 के दशक की शुरुआत में फ़्रांस लौट आया और गैसेंडी का सचिव बना, उसी समय, उसने मोंटपेलियर (Montpellier) से चिकित्सक की उपाधि प्राप्त करने में कामयाबी हासिल की। बर्नियर अपने गुरु के कार्यों को प्रकाशित करने और इसके चिंतन को आगे बढ़ाने के लिए फ़्रांस में रुका होता किंतु इसके बजाय, उसने अभी भी अज्ञात कारणों से, जिनके बारे में उसने वही रूढ़ कारण 'दुनिया को देखने की इच्छा' बताया – एक लंबी यात्रा पर निकलने के लिए फ़्रांस छोड़ा। 1658 में लाल सागर में जेद्दाह और मोका के बंदरगाहों के माध्यम से एक यात्रा उसे 1659 की शुरुआत में सूरत ले आई। उसने अहमदाबाद से शुरू करते हुए और फिर आगरा से कश्मीर और बंगाल तक, दूर-दूर तक, भारत की यात्रा की। कुछ समय के लिए कासिम बाज़ार में रहने के बाद वह मसूलीपट्टनम और गोलकुंडा के लिए रवाना हुआ और यहाँ से वापस सूरत आ गया।

इस बीच वह ईरानी अमीर/कुलीन और बुद्धिजीवी मुल्ला मुहम्मद शफ़ी यज़्दी के रूप में एक शक्तिशाली संरक्षक खोजने में कामयाब रहा, जिसे दानिशमंद ख़ान की उपाधि प्राप्त थी तथा जो अपने जीवन के बाद के वर्षों में वह *मीर बख़्शी* के पद तक पहुँचा था। बर्नियर को उसके चिकित्सा कौशल के लिए मुग़ल दरबार में सामान्यतः प्रशंसा मिली और दानिशमंद ख़ान द्वारा व्यक्तिगत रूप से ग्रीक और लैटिन में शास्त्रीय (classical) परंपरा तथा समकालीन यूरोपीय बौद्धिक विकास के ज्ञान के लिए उसकी विशेष रूप से सराहना की गई थी। बर्नियर, 'एक ओर, स्पष्टतः मुग़लों की इस्लामी दुनिया में उत्तर-गैलीलियन समय का सबसे अच्छा यूरोपीय ज्ञान लाया था, वहीं उसने मुगलों की वास्तविकता को यूरोपीय दर्शकों के सामने प्रस्तुत किया था।' 1670 और 1671 में प्रकाशित चार रचनाओं ने उसे अपनी पीढ़ी में, यूरोप में भारत के प्रमुख व्याख्याकार के रूप में प्रतिष्ठा दिलाईः पहली, *इस्तोरी डे ला डेनियहे रिवोल्यूशों डे एस्तात डू ग्रैंड मोगोल*, और *एवेमें पार्टिकुलियर्स* और फिर 1671 से दो पत्र-संग्रह, दोनों को *सूट डे मेमोयर्स डु सीउर बर्नियर* का शीर्षक दिया गया था। इनमें से कई का 1670 के दशक के मध्य तक अंग्रेजी, इतालवी, डच और जर्मन में अनुवाद हो गया था, जिससे उसे और भी व्यापक पाठक मिले।

जहाँ बर्नियर ने इन प्रकाशित कृतियों में स्वयं को 'सार्वदेशिक' की छवि में प्रस्तुत किया, वहीं इसके साथ ही, उससे 'एक देशभक्त फ़्रांसीसी के रूप में भारत में राजनीतिक, सांस्कृतिक और वाणिज्यिक परिदृश्य के अपने सम्पन्न ज्ञान को नई गठित कम्पनी रोयाल दे इंडे ओरियंताल (Compagnie royale des Indes Orientales) की सेवा में प्रस्तुत करने की उम्मीद भी की गई थी' (सुब्रह्मण्यम 2017: 3)।

'निरंकुश मुग़ल'

बर्नियर का भारत आगमन ऐसे समय में हुआ जब शाहजहाँ के पुत्रों के बीच उत्तराधिकार का युद्ध चल रहा था। औरंगज़ेब का राज्याभिषेक उसके भारत प्रवास के दौरान हुआ। इस प्रकार बर्नियर को दो प्रभावशाली मुग़ल शासकों के काल की घटनाओं को देखने और समझने का अवसर मिला। शाहजहाँ की मृत्यु जब हुई तब बर्नियर मसूलीपट्टनम में था। उसने इस गृहयुद्ध या 'क्रांति' या उत्तराधिकार के युद्ध, जिसमें देश के सभी प्रमुख अमीरों/कुलीनों ने भाग लिया था, का वर्णन किया है। इसके साथ ही उसने गृहयुद्ध की समाप्ति और भारत से उसके जाने के बीच हुई घटनाओं का वर्णन किया है।

बर्नियर ने उस समय के महत्वपूर्ण व्यक्तित्वों को विस्तार से चित्रित किया है। दारा के बारे में वह कहता हैः 'दारा में अच्छे गुणों की कमी नहीं थी और वह बहुत उदार था, लेकिन वह अपने बारे में बहुत उच्च राय रखता था। उसे विश्वास था कि वह अपने दिमाग की शक्ति से सब कुछ कर सकता है। वह उन लोगों के लिए बहुत कठोर था जो उसे सलाह देने या स्थिति की वास्तविकता से अवगत कराने की कोशिश करते थे, यही कारण है कि उसके सबसे प्यारे दोस्तों ने भी उसे उसके भाइयों की साज़िशों और चालों के बारे में सचेत नहीं किया।' वह औरंगज़ेब में दारा के समान शालीनता और नेक आचरण के अभाव का वर्णन करता है, लेकिन उसमें निर्णय लेने की अद्भुत क्षमता थी और उसकी दृष्टि अपने सहायकों और शुभचिंतकों के चयन में बहुत दक्ष थी। वह गंभीर, बुद्धिमान और अपने विचारों और योजनाओं को गुप्त रखने में बहुत कुशल था। शाहजहाँ की प्रभावशाली बेटी के बारे में वह लिखता है, 'जहाँआरा बेग़म साहब अपने पिता की बहुत प्यारी संतान थीं'। बर्नियर शाहजहाँ पर जहाँआरा के

असीमित प्रभाव और महत्वपूर्ण मामलों में उसके हस्तक्षेप से अवगत था। इस प्रकार, बर्नियर के विचारों में, सभी राजनीतिक-प्रशासनिक शक्ति शाही परिवार के व्यक्तियों पर निर्भर थी, साथ ही, वह इस देश में प्रचलित अराजकता को भी दर्ज करता है जो शाही अधिकारियों को किसानों पर 'लगभग पूर्ण नियंत्रण का प्रयोग करने की अनुमति देती थी, और लगभग उतना ही कस्बों और गाँवों के कारीगरों और व्यापारियों पर भी ... यहाँ किसी भी प्रकार के बड़े सामंत, संसद, या स्थानीय अदालतों के न्यायाधीश नहीं हैं, जैसे फ़्रांस में होते हैं, जो निर्दयी उत्पीड़कों पर लगाम लगा सकें, और *क़ाज़ी* या न्यायाधीशों को अन्याय के निवारण के लिए पर्याप्त शक्ति प्रदान नहीं की जाती है ...' (बर्नियर 1914: 224)।

भारत में वाणिज्य की स्थिति

कोलबर्ट को लिखे एक पत्र में बर्नियर ने वाणिज्य की वस्तुओं, जो भारत में विनिर्मित होती हैं और जिनका निर्यात होता है, इसके आयातों, और इसकी ओर होने वाले सोने और चाँदी के प्रवाह का वर्णन किया है। बंगाल न केवल खाद्य पदार्थों के उत्पादन के लिए, बल्कि रेशम, कपास और नील जैसी वाणिज्यिक वस्तुओं के लिए भी जाना जाता है, जो यहाँ उत्पादित होती थीं। देश के अन्य हिस्से भी न केवल रेशम और सूती सामान, बल्कि कालीन, ज़री, कढ़ाई, सोने और चाँदी के वस्त्र बनाने के लिए भी प्रसिद्ध हैं। उसके अनुसार, 'बाहरी देशों से विभिन्न प्रकार के सामान भारत में लाए जाते हैं, लेकिन इन वस्तुओं के आयात के बदले में सोने या चाँदी के निर्यात की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि बाहरी व्यापारियों के लिए बदले में यहाँ के श्रेष्ठ उत्पादों को ले जाना अपेक्षाकृत अधिक लाभदायक होता है' (बर्नियर 1914: 204)। इस प्रकार, विदेशी वस्तुओं और उत्पादों की भारत में आपूर्ति के बाद भी दुनिया के सोने और चाँदी का एक बड़ा हिस्सा 'भारत में अवशोषित होता है, जिसके आने के साधन तो कई हैं, जबकि शायद ही कोई बाहर जाने का रास्ता हो' (बर्नियर 1914: 204)।

निजी संपत्ति का अभाव

'हिन्दुस्तान में *पादशाह* समस्त भूमि का मालिक है', बर्नियर के इस आकलन ने यूरोपीय बुद्धिजीवियों के मन में यह धारणा पैदा कर दी कि भारत में कोई निजी संपत्ति के अधिकार नहीं हैं। यह स्पष्ट है कि बर्नियर का उपरोक्त कथन सत्य से बहुत दूर है। बर्नियर की यह गलत धारणा बनी क्योंकि वह भारत में *जागीर*-व्यवस्था की कार्यप्रणाली को नहीं समझ सका था। हबीब (1963: अध्याय 5) ने दर्शाया है कि मुग़ल भारत में कोई ऐसा एकल 'निजी संपत्ति' का अधिकार नहीं था, जिसका दावा शासक या स्वतंत्र मध्यम वर्ग कर सकें। भूमि, उसकी काश्त, उसके उत्पाद के विभिन्न अंशों पर कई प्रकार के अधिकार थे, जो 'व्यक्तिगत स्तर पर बेचे भी जा सकते थे'। बर्नियर ने ज़ब्त (escheat) के नियम का भी उल्लेख किया है, *पादशाह* के सापेक्ष अमीरों की अस्थिर स्थिति को दर्शाने के लिए। 'राजा के साम्राज्य की समस्त भूमि के स्वामी होने से यहाँ न तो ड्यूक और न ही मार्क्विस जैसे संपत्तिधारी लॉर्ड हैं, और न ही कोई परिवार अपने क्षेत्र से अर्जित सम्पत्ति को धारण कर सकता है और अपनी इस विरासत से प्राप्त सम्पत्ति पर जीवन यापन कर सकता है' (बर्नियर 1914: 211)। मुग़ल सम्राट, 'अपने अमीरों की संपत्ति का उत्तराधिकारी होने के नाते, व्यवस्थित रूप से उनके बेटों और पोतों को बेदखल कर देता है, और उन्हें इस तरह से भिखारी या सामान्य सैनिक मात्र की स्थिति में पहुँचा दिया जाता है।' वास्तव में, यह नियम उन मामलों में लागू किया जाता था जहाँ अमीर/कुलीन को राज्य का बकाया ऋण (*मुतालिबा*) देना शेष हो। आमतौर पर मृत अमीर विशेष की संपत्ति से राज्य द्वारा *मुतालिबा* वसूल करने के पश्चात् शेष संपंत्ति उसके परिवारजनों को राज्य द्वारा वापस लौटा दी जाती थी।

बर्नियर ने कृषकों और भूमि-स्वामित्व के बारे में महत्वपूर्ण विवरण उपलब्ध कराए हैं, जो उस अवधि में कृषि की स्थिति का यथेष्ट प्रतिबिंब देते हैं। उसके अनुसार मजदूरों और काश्तकारों की कमी के कारण भूमि का एक बड़ा हिस्सा बेकार रहता है, क्योंकि उनमें से ज्यादातर *सूबेदार*, आदि के व्यवहार के परिणामस्वरूप मर जाते हैं। ऐसा भी होता है कि अधिकांश किसान उत्पीड़न से हताश होकर अपनी भूमि छोड़ देते हैं और शहरों या छावनियों में जीवन निर्वाह के कुछ अन्य सरल साधन खोजने के लिए चले जाते हैं। कभी-कभी वे राजाओं के क्षेत्र में शरण लेते हैं क्योंकि यहाँ उनके कम उत्पीड़ित होने और कुछ राहत मिलने की संभावना होती है (बर्नियर 1914: 367)। इस जानकारी का उपयोग करते हुए जहाँ इरफ़ान हबीब किसानों से मुग़ल राज्य के निरंतर प्रतिरोध को दर्शाते हैं, ताम्बिया का तर्क है कि यह स्वयं एक शक्तिशाली निरंकुश मुग़ल राज्य की छवि के विपरीत है।

बोध प्रश्न-6

1) निरंकुश मुग़ल राजसत्ता से बर्नियर का क्या अभिप्राय है?

.....

.....

.....

2) भारत में निजी सम्पत्ति के संबंध में बर्नियर के विचार का समालोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

.....

.....

.....

16.8 निकोलो मनुची

निकोलो मनुची का जन्म वेनिस, इटली में हुआ था। बहुत कम उम्र में ही, 1653 और 1655 के बीच, मनुची बंदर अब्बास से सूरत के मुग़ल पत्तन के लिए एक जहाज़ पर सवार हुआ था, और लगभग 1656 के बाद, मुग़ल राजकुमार दारा शिकोह के तोपख़ाने में कार्यरत था। जेसुइट (Jesuit) पादरियों से उसने फ़ारसी भाषा सीखी और इसके बाद स्वयं को चिकित्सा के प्रति समर्पित कर दिया। उसने मुग़ल सम्राट के दरबार में एक चिकित्सक के रूप में अपनी सेवाएँ प्रदान कीं और 'यहाँ के अदब, रीति-रिवाज़ों, प्रशासन, धर्म और एक महान् साम्राज्य के संचालन से जुड़ी हर चीज़ का अवलोकन किया।' दारा के कारावास और फांसी के बाद उसने पटना और बंगाल के लिए प्रस्थान किया; और बाद में आगरा और दिल्ली लौट आया, और मिर्ज़ा राजा जय सिंह की सेवा में कार्यरत हुआ। इसके बाद, वह मुग़ल सेवा से निवृत्त होकर पुर्तगालियों की सेवा में शामिल हो गया, मुग़ल सेवा में उसका यह आना-जाना लगातार बना रहा, और अपने अंतिम वर्षों के दौरान वह कुछ समय मद्रास में रहने और ईस्ट इंडिया कंपनी के लिए काम करने के बाद पांडिचेरी में था। इसी दौरान उसने अपने संस्मरण लिखने शुरू किए और उन्हें 1700 में पेरिस भेजा, जहाँ वे जेसुइटों (Jesuits) के हाथों में पहुँच गए, जिनका एक विकृत संस्करण 1705 में फ्रेंसोहा कत्रो (Francois Catrou) की कलम से *इस्तोर जेनरल डे ल'एम्पायर डू मोगल डेपुइस सा फोंडेशन, सुर लेस मेमोयर्स पोर्टुगैस डी एम. मनौची* (पेरिस, 1705) के रूप में प्रकाशित हुआ।

मुग़ल भारत पर शोध में संलग्न इतिहासकारों ने मनुची की कृतियों का विभिन्न तरीकों से व्यापक उपयोग किया है। 'ऐसा करने में ये उसके *स्टोरिया डेल मोगोल* के मूल पाठ का उल्लेख नहीं करते हैं, जिसके प्रकाशन का एक अत्यंत जटिल इतिहास रहा है, बल्कि 1907 में भारतीय सिविल सेवा के विलियम इरविन द्वारा प्रकाशित बहुत ही उपयोगी चार-खंडों के अंग्रेज़ी अनुवाद का प्रयोग करते हैं – जो मिश्रित शीर्षक, आधे इतालवी और आधे पुर्तगाली, *स्टोरिया डो मोगोर* के नाम से प्रकाशित हुआ था' (सुब्रह्मण्यम 2008: 40)।

उसकी रचनाओं में हमें तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों का जीवंत वर्णन मिलता है। मनुची ने दारा के साथ विश्वासघात और उसकी मृत्यु की परिस्थितियों का वर्णन किया है, और औरंगज़ेब की सुकृत नियति, गोवा के निकट के अभियान, और गोलकुंडा पर मुग़ल हमलों और विजय पर विस्तार से चर्चा की गई है। उसने 1700 और 1707 के बीच औरंगज़ेब की गतिविधियों के विस्तृत विवरण दिए हैं, जिसमें इस प्रदेश की उजाड़ स्थिति, 1702 से 1704 के बीच पड़ा लंबा सूखा (drought), और मसूलीपट्टनम में मराठों की घुसपैठ के साथ ही उत्तर में ग्वालियर तक उनके अभियानों के संदर्भ भी हैं। सत्रहवीं शताब्दी के मुग़ल भारत के रीति-रिवाज़ों और परंपराओं के बारे में मनुची की टिप्पणियाँ बहुत महत्वपूर्ण हैं, ग्वालियर घराने की संगीत परंपराओं पर मनुची की जानकारी, पारसी समुदाय की धार्मिक मान्यताओं, मुग़ल भारत के फलते-फूलते वाणिज्यिक केंद्र के रूप में सूरत के वर्णन, सत्रहवीं शताब्दी में अकबर के उदारवादी दृष्टिकोण के संबंध में धारणाओं के साथ ही मीना बाज़ार, मुग़ल *हरम,* आदि के संबंध में उसका विवरण तथ्यात्मक और प्रासंगिक प्रतीत होता है। कुछ इतिहासकारों ने मनुची की 'गपशप शैली' और 'बाज़ारू अफ़वाहों' पर निर्भरता के लिए उसकी आलोचना भी की है। सुब्रह्मण्यम ने उसे 'पास्युर कल्चरल' (passeur cultural) के रूप में वर्गीकृत किया, जिसका अर्थ है

एक व्यक्ति जो एक सांस्कृतिक परिवेश से दूसरे सांस्कृतिक परिवेश में सहजता से भ्रमण करता है (सुब्रह्मण्यम 2008: 38)।

मनुची ने स्पष्ट रूप से मुग़ल भारत में अपने जीवन और ***जेंटीलों*** (हिंदुओं) के साथ संपर्क को नकारात्मक ढाँचे में परिभाषित किया है, वह यहाँ की स्थिति ग्राह्य नहीं कर पाता है। वह लिखता है:

> .... अगर भगवान की कृपा से मुझे वहाँ कुछ अच्छी किस्मत चमकाने का अवसर मिला भी था, तो भी मैं वहाँ कभी बसना नहीं चाहता था, क्योंकि वास्तव में उनके पास किसी यूरोपीय व्यक्ति के मन को आनंद देने वाली या प्रभावित करने वाली चीजें नहीं हैं कि वहाँ रहा जाए, क्योंकि वे न तो शरीर के लिए अच्छे हैं, और आत्मा के लिए तो और भी कमः शरीर के लिए, क्योंकि वहाँ लगातार सतर्क रहना ज़रूरी है क्योंकि आपको ऐसे लोग नहीं मिलेंगे जिनकी बात पर भरोसा किया जा सकता है और जो कुछ भी कहा जाता है उस सब कुछ को संदेह से देखना चाहिए और उससे उल्टा ही समझना चाहिए, जैसा कहा गया हो, क्योंकि वे लोग पूर्ण रूप से ऐसा व्यवहार करते हैं जैसा कि मेरे देश में कहा जाता हैः अच्छे शब्द और दुखद कार्य बुद्धिमान और मूर्ख व्यक्ति को समान रूप से गुमराह करते हैं। इसलिए, जब वे आपके सर्वाधिक प्रिय मित्र होने का दावा करते हैं, तो दोगुनी सावधानी दिखाने की आवश्यकता है। यह आत्मा के लिए अच्छा नहीं है, दोनों कारणों से, एक तो जिस तरह का स्वतंत्र आचरण वे करते हैं, और दूसरा कैथोलिक अनुकरण की कमी के कारण, और इसलिए जब मैं वहाँ से निकल सकता था, तो मैंने ऐसा किया, और मैं वहाँ कभी नहीं लौटा, जब तक किसी आवश्यकतावश ऐसा करना न पड़ा हो ...
>
> **सुब्रह्मण्यम 2008: 61**

तीसरा भाग, जिसमें अधिकांश खंडों को 'भारत के *जेंटीलों* (हिंदुओं) के क्या विश्वास हैं और ईश्वर के संबंध में उनकी धारणाओं के सार पर संक्षिप्त जानकारी ' शीर्षक के तहत वर्णित किया गया है और यह भाग ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र (शिव) की विस्तृत चर्चा से शुरू होता है। हालांकि, यही खंड लोगों भारतीयों के रीति-रिवाज़ों और शासन व्यवस्था का वर्णन करने की ओर मुड़ जाता है, यह विवरण भारतीयों के बारे में उसकी पक्षपाती, पूर्वाग्रही और पूर्व-निर्धारित धारणा को सामने लाता है। इस संदर्भ में मनुची की टिप्पणियाँ दक्षिण भारत के *नायक* राज्यों की ओर इशारा करती हैं। वह इस खंड को 'उन लोगों के बीच प्रचलित प्रशासन की शैली' के रूप में प्रस्तुत करता है, जो इस प्रकार से है:

> इन *जेन्टीलों* की सरकार सर्वाधिक अत्याचारी और बर्बर है जितनी कि कोई कल्पना कर सकता है, इसका कारण इस तथ्य के अलावा कि सभी राजा विदेशी (एट्रेंजर; etrangers) हैं, वे अपनी प्रजा को दासों से भी बदतर मानते हैं; सभी भूमि राजा की होना, और प्रजा में ऐसा कोई भी न होना है, जिसके पास अपनी भूमि, या विरासत, या किसी प्रकार का अधिकार हो, जिसे वह अपनी संतानों के लिए छोड़ सके।
>
> **सुब्रह्मण्यम 2008: 63**

महिलाओं का निरूपण

मनुची ने हमें मुग़ल *हरम* और मुग़ल राजव्यवस्था पर शक्तिशाली महिलाओं के प्रभाव का विस्तृत विवरण दिया है। वह राजकुमारी जहाँआरा के बारे में लिखता है कि पान पर उसके ख़र्च के लिए सूरत के बंदरगाह के राजस्व के अलावा 30 लाख रुपये की वार्षिक आय निर्धारित थी। इसके अलावा, उसके पास उसके पिता द्वारा दिए गए कई बहुमूल्य रत्न और जवाहरात थे। हाल ही में इतिहासकारों ने उन लैंगिक रूपकों का अन्वेषण किया है जिनमें यूरोपीय यात्रियों के लेखन में महिलाओं का निरूपण किया जा रहा था। चैटर्जी का तर्क है कि यूरोपियन यात्रा-वृत्तांतों में प्रायः हिन्दू तथा मुस्लिम महिलाओं के मध्य कथित अंतर धुँधला दिखाई देता है।

चटर्जी, टेल्शर के इस सुझाव पर टिप्पणी करते हुए कि आरम्भिक यूरोपीय निरुपणों में शास्त्रीय साहित्यिक ढाँचे का उपयोग *सती* को एक दृढ़ और साहसी नायिका के रूप में चित्रित करने के लिए अपनाया गया था, का तर्क है कि, यात्रा-वृत्तांत/लेखक सती को हमेशा ही शास्त्रीय नायिका से संबंधित करके नहीं देखते हैं; इस घटना का वर्णन करने के और भी कई तरीके हैं, *सती* की परम्परा की निंदा करते हुए, यात्री *सती* के विचित्र व्यवहार पर गम्भीर संदेह भी प्रकट करते हैं। जैसा कि मनुची के विवरण में देखा जा सकता है। चैटर्जी का तर्क है कि *सती* के इस कृत्य में महिला की स्वतंत्र इच्छा हमेशा से सवालों के घेरे में रही है, यदि उसे नकारा न भी गया हो तो। 'एक ही यात्रा-वृत्तांत/लेखक (यहाँ, मनुची) के आख्यान के भीतर, हम विभिन्न रूपकों को देख सकते हैं जिनका उपयोग *सती* को चित्रित करने के लिए किया जाता है' (चटर्जी 2013: 72)। मनुची विधवा के साहस की प्रशंसा करते हुए *सती* का वर्णन शुरू करता है और फिर यह विवरण संत्रास में बदल जाता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सत्रहवीं शताब्दी में मुग़लों और भारतीय उपमहाद्वीप के सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश के बारे में यूरोपीय दृष्टिकोण को समझने के लिए मनुची का विशाल लेखन-कार्य बहुत महत्वपूर्ण है।

बोध प्रश्न-7

1) मनुची अन्य यूरोपीय यात्रियों से किस प्रकार भिन्न था?

.....

.....

.....

2) मनुची के सती के वर्णन की विवेचना कीजिए।

.....

.....

.....

16.9 सारांश

इस इकाई में हमने भारत आए यूरोपीय यात्रियों के लेखनों की चर्चा की है, जिसकी शुरुआत में निकितिन की चर्चा की गई है, जो पन्द्रहवीं शताब्दी के अंत में रूस से भारत आया था और अंत में इतालवी यात्री निकोलो मनुची की चर्चा है, जिसका लेखन अठारहवीं शताब्दी की बिल्कुल शुरुआत में सामने आया। इन शताब्दियों के बीच भारतीय राजनीतिक-सांस्कृतिक परिवेश में व्यापक बदलाव आ रहे थे, वहीं यह काल यूरोप से आने वाली व्यापारिक कम्पनियों के भारतीय परिदृश्य में उदय का समय था। कुछ यात्री इन कम्पनियों से जुड़े थे, पायस, नूनिज़, तथा टॉमस रो; कुछ स्वतंत्र व्यापारी थे, जैसे टैवर्नियर; वहीं कुछ स्वतंत्र अन्वेषक थे और उनका संबंध यूरोप में हो रहे नवीन बौद्धिक विकासक्रम से था, जैसे बर्नियर। मनुची जैसी अलग शख़्सियत भी थी। इनके वर्णनों को जहाँ इनकी निजी और राजनीतिक परिस्थितियों ने प्रभावित किया, वहीं इस अनजाने देश के माहौल ने इनके भीतर अचम्भा पैदा किया और कई बार डर भी। स्वयं की धार्मिक श्रेष्ठता के भाव के साथ ही अधिकांश विदेशी यात्रियों की भारतीय भाषाओं से अज्ञानता ने कई बार भारतीय संस्कृति और विश्वासों के संबंध में उनके अवलोकन को संकीर्णता से भर दिया। भारत में राजनीतिक सत्ता के स्वरूप के संबंध में उन्होंने ऐसी छवियाँ (एशियाटिक निरंकुशतावाद, भूमि पर निजी स्वामित्व का अभाव, और नैतिक रूप से भ्रष्ट धार्मिक-सामाजिक परम्पराएँ) गढ़ीं, जिनका यूरोप में भारत-संबंधी ज्ञान के सृजन में भरपूर इस्तेमाल हुआ, मांटेस्क्यू से लेकर मार्क्स तक ने अपने सैद्धांतीकरण में इसका उपयोग किया। यद्यपि कई मामलों में इन यूरोपीय यात्रियों के वर्णन भारतीय अतीत के उन हिस्सों को दर्ज करते हैं, जिन्हें या तो तयशुदा मानकर नज़रंदाज़ कर दिया गया है, या फ़ारसी *तारीख़ों* के दरबारी लेखन में उनकी असंभावना थी, उदाहरणार्थ, भारत के निचले तबकों की जीवन शैलियाँ, मुग़ल *हरम* जीवन, आर्थिक उत्पादन की पद्धतियाँ और उनका वितरण, इत्यादि। आवश्यकता केवल इस बात की है कि इनके अध्ययन में उनके पक्षपातों, पूर्वाग्रहों और निजी सीमाओं का ध्यान रखा जाए।

16.10 शब्दावली

जेंटील — इस शब्द का प्रयोग यूरोपियों द्वारा उन भारतीयों का संकेत करने के लिए किया जाता था, जो मुस्लिम नहीं थे

सीमित संघर्ष — संजय सुब्रह्मण्यम ने इस व्यंजक का प्रयोग मोटे तौर पर 1500 से 1750 के बीच यूरोपीय तथा एशियाई (विशेष रूप से भारतीय) लोगों के बीच अंतःक्रिया की विशेषता बताने के लिए किया है। यह एक ऐसा काल था, जिसमें यूरोपियों द्वारा, क्रूरता के साथ और सचेतन ढंग से, एशिया और इसके लोगों पर आधिपत्य जमाने के बजाय एशियाई तथा यूरोपियों के बीच महत्वपूर्ण सहयोग का साक्षी था

नरसिंह या बिसनाग का राज्य	पुर्तगाली यात्री विजयनगर राज्य को नरसिंह का राज्य (जो सालुव नरसिंह का संकेत करता था जिसने संगम वंश से सत्ता का हरण किया था) कहते थे; बिसनाग शब्द की उत्पत्ति विजयनगर से हुई थी
एशियाटिक निरंकुशतावाद	निरंकुश सरकार का एक विशेष दमनकारी रूप, विशेष रूप से, पूर्व-आधुनिक एशियाई राजव्यवस्था के साथ इसकी पहचान की जाती है, बर्नियर के विवरण ने, विशेष रूप से, मुग़ल राज्य की एक छवि बनाई जो प्राच्य निरंकुशता की मिसाल थी। बाद में, यूरोपीय बुद्धिजीवियों ने पूर्व-आधुनिक भारतीय राजनीति की व्याख्या करने के लिए इन यात्रा विवरणों का उपयोग किया
सती	एक हिंदू विधवा द्वारा अपने पति की चिता पर स्वयं को भस्मीभूत कर देने की प्रथा। *सती* का वर्णन अधिकांश यूरोपीय यात्रा-वृत्तांतों की एक नियमित विशेषता थी। न केवल इस कृत्य या प्रथा ने महिला के स्वैच्छिक कर्ता होने संबंधी विमर्श को प्रभावित किया, बल्कि यह धारणा भी पैदा की कि हिंदू धार्मिक प्रथाएँ कठोर हैं

16.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) देखें उप-भाग 16.2.1, भारत और यहाँ के निवासी
2) देखें उप-भाग 16.2.2, नगर तथा वाणिज्यिक गतिविधियाँ

बोध प्रश्न-2

1) देखें उप-भाग 16.3.1
2) देखें उप-भाग 16.3.2
3) देखें उप-भाग 16.3.1 और 16.3.2
4) देखें उप-भाग 16.3.1 तथा 16.3.2

बोध प्रश्न-3

1) देखें भाग 16.4, जहाँगीर के *दरबार* का वर्णन
2) देखें भाग 16.4

बोध प्रश्न-4

1) देखे भाग 16.5
2) देखे भाग 16.5, इस भाग का अंतिम उद्धरण

बोध प्रश्न-5

1) देखे भाग 16.6, उन मार्गों और व्यापारिक केंद्रों का उल्लेख करें जहाँ वह गया था
2) देखे भाग 16.6, मंदिरों और पुरोहितों के संबंध में उसके मत

बोध प्रश्न-6

1) देखे भाग 16.7, निरंकुश मुग़ल
2) देखे भाग 16.7, निजी सम्पत्ति का अभाव

बोध प्रश्न-7

1) देखे भाग 16.8
2) देखे भाग 16.8, महिलाओं का निरूपण

16.11 संदर्भ ग्रंथ

बनर्जी, रीता, (2017) 'थॉमस रो एंड टू कोर्ट्स ऑफ़ एम्परर जहाँगीर एंड किंग जेम्स', *एट्यूड्स आंग्ले,* 70: 147-166; 10-3917/etan-702-0147.

बेकलोव, ग्रेगरी, (1950) *द जर्नी बियांड थ्री सीज़ ऑफ़ अफ़नासीज निकितिन, 1466-1472* (न्यूयार्कः ब्रिटिश कोलंबिया यूनिवर्सिटी).

बर्नियर, फ्रंस्वा, (1914) *ट्रैवल्ज़ इन द मुग़ल एम्पायर; सी ई 1656-1708* (आर्चिबाल्ड कांस्टेबल (1891) द्वारा अनुवादित और एनोटेट, विन्सेंट ए स्मिथ द्वारा संशोधित) (ऑक्सफोर्डः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

चटर्जी, पी, (2012) 'जेंडर एंड ट्रैवल राइटिंग इन इंडिया, *c*. 1650-1700', *सोशल साइंटिस्ट,* 40 (3/4), 59-80.

चिदा-रज़वी, मेहरीन, (2014) 'द परसेप्शन ऑफ़ रिसेप्शनः द इम्पॉर्टन्स ऑफ़ थॉमस रो एट द मुग़ल कोर्ट ऑफ़ जहाँगीर', *जर्नल ऑफ़ वर्ल्ड हिस्ट्री,* 25: 263-284.

इरविन, डब्ल्यू, (1903) 'नोट्स ऑन निकोलाओ मनुची एंड हिज़ "स्टोरिया डू मोगोर"', *जर्नल ऑफ़ द रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ़ ग्रेट ब्रिटेन एंड आयरलैंड,* पृ. 723-733.

कालरा, सिद्धांत, (2014) 'बर्नियर ट्रैवल्ज़ टू इंडिया'; https://www.researchgate. net/publication/292615870

मनूची, निकोलो, (1907-08) *मोगुल इंडिया, या स्तोरिया डो मोगोर,* विलियम इर्विन द्वारा अनुवादित, 4 भाग (लंदनः जॉन मरे).

पेल्सार्ट, फ्रांसिस्को, (1925) *जहाँगीर'स इंडियाः द रेमोंस्ट्रांत ऑफ़ पेल्सार्ट,* डब्ल्यू. एच. मोरलैंड तथा पी. गेल द्वारा अनुवादित (कैम्ब्रिजः डब्ल्यू. हेलर एंड संस).

रो, थॉमस, (1899) *द एम्बेसी ऑफ़ सर थॉमस रो, द कोर्ट ऑफ़ द ग्रेट मोगुल, 1615-1619. एज़ नैरेटेड इन हिज़ जर्नल एंड कॉरेस्पॉडेन्स,* विलियम फ़ॉस्टर, संपा., दो भाग (लंदनः हम्फ्री मिलफोर्ड).

सीवेल, आर., (1900 [1991]) *ए फॉरगॉटन एम्पायरः विजयनगर, क्रॉनिकल्स ऑफ पेस एंड नुनिज* (दिल्लीः एशियन एजुकेशनल सर्विसेज).

श्लापेंटोख, दिमित्री, (2012) 'अफानसी निकिति'स वॉयजज़ बीआंड थ्री सीज़ः ऐन ऑर्थोडॉक्स रशियन इन मिडीवल इंडिया', *ओरियंस,* 40, पृ. 169-190.

सुब्रह्मण्यम, एस., (2008) 'फ़र्दर थॉट्स ऑन एन इनिग्माः द टोर्चरस लाइफ़ ऑफ़ निकोलो मनुची, 1638-*c*.1720', *द इंडियन इकोनॉमिक एंड सोशल हिस्ट्री रिव्यू,* 45(1), 35-76.

सुब्रह्मण्यम, एस., (2017) *यूरोप'स इंडियाः वड्र्ज़, पीपल, एम्पायअर, 1500-1800* (कैम्ब्रिज, मैसाचुसेट्सः हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

तांबिया, एस. जे., (1998) 'व्हाट डिड बर्नियर ऐक्चूअली से? प्रोफ़ायलिंग द मुग़ल एम्पायर', *कॉट्रिब्यूशन टू इंडियन सोशोलोज़ी,* 32 (2), 361-386.

टैवर्नियर, जीन बैप्टिस्ट, (1977 [1925]) *ट्रैवल्ज़ इन इंडिया,* वी. बॉल, अनुवादित, डब्ल्यू-क्रुक, संपा., दो भाग (दिल्लीः मुंशीराम मनोहरलाल पब्लिकेशर्स).

टेल्शर, केट, (1997) *इंडिया इंस्क्राइब्डः यूरोपियन एंड ब्रिटिश राइटिंग ऑन इंडिया, 1600-1800* (दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

वनीना, यूजेनिया, (2013) 'रोड्ज़ ऑफ़ मिसंडर्स्टैंडिंगः यूरोपियन ट्रैव्लर्ज़ इन इंडिया (फ़िफ़्टीन्थ टू सेवेंटीन्थ सेंचरी)', *द इंडियन हिस्टोरिकल रिव्यू,* 40.

16.13 शैक्षणिक वीडियो

मुग़ल हिस्टोरियोग्राफ़ी एंड सोर्सेज़-III
https://www.youtube.com/watch?v=DQzm9h0gXAI